तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

मार्च-2020 रु.5/-

२०२० मार्च
०५ से ०९ तक
तिरुमल
श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी का
प्लवोत्सव

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

तिरुपति

श्री कोदंडरामस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव

२३-०३-२०२० से ३१-०३-२०२० तक

२३-०३-२०२० सोमवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - महाशेषवाहन

२४-०३-२०२० मंगलवार
दिन - लघुशेषवाहन
रात - हंसवाहन

२५-०३-२०२० बुधवार
दिन - सिंहवाहन
रात - मोतीवितानवाहन

२६-०३-२०२० गुरुवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - सर्वभूपालवाहन

२७-०३-२०२० शुक्रवार
दिन - पालकी में मोहिनी अवतारोत्सव
रात - गरुडवाहन

२८-०३-२०२० शनिवार
दिन - हनुमन्तवाहन
सायं - वसंतोत्सव
रात - गजवाहन

२९-०३-२०२० रविवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

३०-०३-२०२० सोमवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - अश्ववाहन

३१-०३-२०२० मंगलवार
दिन - चक्रस्नान
रात - ध्वजावरोहण

भवान् भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिञ्जयः।
अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च।।
(- श्रीमद्भगवद्गीता १-८)

आप - द्रोणाचार्य और पितामह भीष्म तथा कर्ण और संग्रामविजयी कृपाचार्य तथा वैसे ही अश्वत्थामा, विकर्ण और सोमदत्त का पुत्र भूरिश्रवा।

इदं गीताशास्त्रं परमपुरुषार्थैक निलयं,
त्रिकाण्डं वेदार्थं सकलमिह संगृह्य कथितम
स्वयं श्रीकृष्णेन श्रुतिविशदतत्वेन विभुना
जपा ध्याना ज्ञाना च्छ्रुतमपि फलत्येव सुधियाम।।
(- गीता मकरंद, गीता - स्तोत्र कदंब)

गीताशास्त्र परम पुरुषार्थ रूपी मोक्ष का निलय है। काण्डत्रयात्मक वेद का सारा अर्थ संगृहीत कर सर्व व्यापी भगवान श्रीकृष्ण के द्वारा विस्तार से यह बताया गया है। इसलिए इसका जप, ध्यान एवं श्रवण करने और इसका ज्ञान प्राप्त करने से बुद्धिमानों को अवश्य फल प्राप्त कराएगा।

तिरुपति एवं उसके आसपास के दर्शनीय क्षेत्र

श्री गोविंदराज स्वामी मंदिर : आंध्रप्रदेश के चित्तूर जिले में तिरुमल पर्वत के पदभाग में तिरुपति स्थित है। वैष्णवधर्म के प्रवर्तक श्री रामानुज से संबंध रखनेवाला यह पुरातन शहर है। ११३० ए.डि. में प्रख्यात वैष्णवधर्म के प्रवर्तक श्री रामानुज ने श्री गोविंदराज स्वामी मंदिर का निर्माण कर, परिसर के छोटे प्रांत को आवास योग्य बनाकर, उसे 'तिरुपति' का नाम रखा। पुराणों के अनुसार, यहाँ के मूर्ति की वैष्णव सम्प्रदाय के प्रवर्तक एवं महान आचार्य श्री रामानुज ने प्रतिष्ठा की। भगवान तो शयन मुद्रा में है। इस प्रांगण में श्री आण्डाल, श्री पार्थसारथी एवं श्री वेंकटेश्वरस्वामी के मंदिर हैं।

श्री कोदंडराम स्वामी मंदिर : तिरुपति रेल्वेस्टेशन से एक कि.मी. दूरी पर श्रीराम का मंदिर है। लंका से वापस आते वक्त सीता लक्ष्मण सहित श्रीराम के तिरुपति आगमन के स्मरण में इस मंदिर का निर्माण किया गया है। शिलालेख के आधार से १५वीं शताब्दी में सालुव नरसिंह का अभ्युदय के लिए नरसिंह मोदलियार नामक व्यक्ति ने इस मंदिर का निर्माण किया।

श्री कपिलेश्वर स्वामी मंदिर : तिरुपति से तीन कि.मी. दूरी पर भगवान शिव का मंदिर है। कपिल महर्षि द्वारा प्रतिष्ठापित होने के कारण भगवान को कपिलेश्वर और तीर्थ को कपिलतीर्थम् का नाम प्रचलित हो गया है।

अलमेलुमंगापुरम् (तिरुचानूर) : तिरुपति से ५ किलोमीटर दूरी पर यह मंदिर स्थित है। श्री वेंकटेश्वरस्वामी की पत्नी श्री पद्मावती देवी का मंदिर है। कहा जाता है कि तिरुचानूर में विराजमान श्री पद्मावती देवी के दर्शन के बाद ही तिरुमल-यात्रा की सफलता प्राप्त होगी। श्री पद्मावती देवी मंदिर की पुष्करिणी को 'पद्मसरोवर' कहा जाता है। पुराणों के अनुसार भगवती देवी ने इस पुष्करिणी के स्वर्णपद्म में स्वयं अवतार लिया है।

श्रीनिवासमंगापुरम् : तिरुपति से १२ किलोमीटर दूरी पर यह मंदिर स्थित है। ग्राम की आग्नेय दिशा में श्री कल्याण वेंकटेश्वरस्वामी का मंदिर है। पुराणों में कहा गया है कि श्री वेंकटेश्वरस्वामी ने श्री पद्मावती देवी से विवाह करने के बाद तिरुमल जाने के पूर्व कुछ समय तक इस क्षेत्र में ठहरे। १६वीं सती में ताल्लपाक चिन्न तिरुवेंगडनाथ ने इस मंदिर का जीर्णोद्धारण किया।

नारायणवनम् : तिरुपति से लगभग २२ किलोमीटर की दूरी पर आग्नेय दिशा में स्थित मंदिर में श्री कल्याण वेंकटेश्वरस्वामी विराजमान है। इसी पवित्र क्षेत्र में आकाशराजा की पुत्री श्री पद्मावती देवी एवं श्री वेंकटेश्वरस्वामी का विवाह सम्पन्न हुआ था। इस महान घटना की याद में आकाशराजा ने इस मंदिर का निर्माण करवाया।

नागलापुरम् : इस मंदिर में श्री वेदनारायण स्वामी विराजमान हैं। तिरुपति से लगभग ६५ कि.मी. दूरी पर आग्नेय दिशा में यह मंदिर स्थित है। विजयनगर शैली को प्रतिबिंबित करनेवाली यह सुन्दर नमूना है। गर्भगृह में दोनों ओर श्रीदेवी व भूदेवी सहित मत्स्यावतार रूपी श्री विष्णु की मूर्ति विराजमान हैं। मंदिर की विशिष्टता का प्रमुख कारण है, सूर्याराधना। हर वर्ष मार्च महीने में सूर्य की किरणे तीन दिन तक गोपुर से होती हुई गर्भगृह में स्थित मूर्ति को स्पर्श करती हैं। इसे सूर्य द्वारा भगवान की आराधना मानी जाती है। विजयनगर सम्राट श्रीकृष्णदेवराय ने अपनी माता के अनुरोध पर इस मंदिर का निर्माण कराया।

अप्पलायगुंटा : अप्पलायगुंटा में श्री प्रसन्नवेंकटेश्वरस्वामी का मंदिर है। तिरुपति से १५ कि.मी. दूरी पर स्थित है। ब्रह्मोत्सव तथा प्लवोत्सव आदि को बडे पैमाने पर मनाया जाता है। इस प्राचीन मंदिर में श्री पद्मावती देवी एवं आंडाल की मूर्तियाँ विराजमान हैं। कार्वेटिनगरम् के राजाओं से निर्मित इस मंदिर के सामने श्री आंजनेय स्वामी की मूर्ति है। दीर्घकालीन व्याधियों के निवारण के लिए यहाँ विराजमान श्री आंजनेय स्वामी की भक्तों द्वारा पूजार्चना की जाती है।

कार्वेटिनगरम् : तिरुपति से ५८ कि.मी. दूरी पर पुत्तूर के निकट यह मंदिर स्थित है। रुक्मिणी, सत्यभामा सहित श्री वेणुगोपाल स्वामी के दर्शन कर सकते हैं। प्राचीन काल में नारायणवनम् के राजाओं ने इसका निर्वहण किया। हनुमत्समेत श्री सीताराम व लक्ष्मण की एकशिला मूर्ति इस मंदिर में विराजमान हैं।

सप्तगिरि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति।।

वर्ष-५० मार्च-२०२० अंक-१०

विषयसूची

श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामीजी का मंदिर, तरिगोंडा	डॉ.जी.मोहन नायुडु	07
तिरुक्कच्चिनंबि (कांचीपूर्ण स्वामीजी)	श्री अजय कुमार सरफ	09
श्री कुलशेखर स्वामीजी	श्रीमती अनिता रमाकांत दरक	11
श्री धनुर्दास स्वामीजी	श्री गिरिधर गोपाल वी.दरक	15
मणक्काल्नंबि (श्रीराममिश्र स्वामीजी)	श्री हर्षित मर्डा	18
तिरुमालै आंडान (मालाधर स्वामी)	श्रीमती पूजा माधवदास अगर्वाल	21
होली उत्सव (रंगोत्सव)	श्रीमती प्रीति ज्योतीन्द्र अजवालिया	24
श्रीमहालक्ष्मी! कोल्हापुरनायकी!!	डॉ.जी.सुजाता	31
कालदैव 'उगादि'	डॉ.बी.के.माधवी	34
श्रीमहाविष्णु का मत्स्यावतार	श्री ज्योतीन्द्र अजवालिया	36
भागवत कथा सागर शक्तिशाली असुर वृत्रासुर	श्री अमोघ गौराँग दास	39
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि. तापडिया	41
श्री रामानुज नूट्रन्दादि	श्री श्रीराम मालपाणी	43
आसुरी गुणों द्वारा विनाश	श्री अमोघ गौराँग दास	44
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	46
दिव्यक्षेत्र तिरुमल	श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण	48
आइये, संस्कृत सीखेंगे...!!	डॉ.सी.आदिलक्ष्मी	52
राशिफल	डॉ.केशव मिश्र	51

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri_helpdesk@tirumala.org

गौरव संपादक
श्री अनिलकुमार सिंघाल, आई.ए.एस्.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री आर.वी.विजयकुमार, बी.ए., बी.एड्.,
उपकार्यनिर्वहणाधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

जीवन चंदा .. रु.500-00
वार्षिक चंदा .. रु.60-00
एक प्रति .. रु.05-00
विदेशियों को वार्षिक चंदा .. रु.850-00

मुखचित्र - श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी का प्लवोत्सव, तिरुमल।
चौथा कवर पृष्ठ - श्री सीता लक्ष्मण समेता श्री कोदंडरामस्वामीजी, तिरुपति।

अन्य विवरण के लिए:
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, 2264360.

सूचना

मुद्रित रचनाओं में व्यक्त किये विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।

- प्रधान संपादक

'सौहर्द्रता ही शुभेच्छा बनी'

हमारे भारतवासी इतने भक्त हैं कि वे हर जगह भगवद्भक्ति रखते हैं, हर जगह पर भगवान का साक्षात्कार भी प्राप्त करने की योग्यता व दक्षता रखनेवाले हैं। इस प्रसू की प्रकृति, स्त्री का रूप हैं, केवल भगवान ही एक मात्र पुरुष या पुरुषोत्तम है। समय या काल-चक्र भले ही निराकारी या निःस्वरूपा हो, वह अपनी नियतशक्ति के बल पर प्रकृति में चेतनता जगाकर, मानव को जीवन की लक्ष्यसाधना में अग्रसर कर विजयी बनता है। गीताचार्य ने भगवद्गीता में यह कहा कि 'समस्त जगत को सचेत करने वाला कालचक्र मैं ही हूँ।' इस कालचक्र को अपनी-अपनी रीति से गिनकर, स्थापित कर, समस्त विश्व के देश, किसी एक दिन को 'वार्षिकी' के रूप में कोई नाम देकर, ''नयावर्ष'' कहकर पर्व मनाते हैं। दक्षिण भारत में, आंध्रप्रदेश के लोग इसे 'उगादि' नाम से नयेवर्ष का स्वागत करते हैं।

आंध्रप्रदेश में, चांद्रमान के अनुसार, वसंतऋतु के चैत्रशुद्ध पाड्यमी को 'उगादि' मनाया जाता है। उस दिन को हर एक व्यक्ति काल के अधिपति भगवान से यह प्रार्थना करता है कि उसका जीवन उगादि के दिन से लेकर पूरे वर्ष में उत्साह, उमंग, सफलतम, श्रेष्ठ, शांतमय जीवन हो। यह दिन, वर्षगत कालचक्र के पथ का पहला कदम माना जाता है, इसीलिए पर्व के रूप में मनाया जाता है।

इसी महीने में 'अंतर्राष्ट्रीय महिला दिनोत्सव' भी मनाया जाता है। पूरा विश्व शक्ति से भरा हुआ है। इस शक्ति को ही 'स्त्री' के रूप में विशेषतया मातृमूर्ति के रूप में मानकर, उसकी स्तुति करना एक विशिष्टता रखती है। आर्योक्ति है कि - 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते, रमंते तत्र देवताः' - जहाँ स्त्रियों का सम्मान होता है, वहाँ देवता समूह आनंद के साथ आशीर्वाद देते रहते हैं। स्त्री के कारण ही पूरा विश्व अपना अनेकानेक रूप धारण करता है। स्त्री का प्रधान रूप 'माँ' का रूप है। इसके अलावा उसके अन्य रूप रिश्तों के आधार पर बनती रहती हैं। उसके ये सारे रूप, उस अंतर्निहित धागे के समान है, जो माला को पिरोने में काम आती है। अंतर्निहित शक्ति रूप ही 'मातृदेवता' का रूप है। इसीलिए 'मातृ देवो भव', वेदोक्ति है, यानी माता को कोई देवी मानो और उसकी निरंतर पूजा करो। यह वेदवाक्य समस्त विश्व में उपयुक्त रटनेवाला कालजयी महामंत्र है। नवजात शिशु का गुरु माँ ही है। माँ शिशु को जन्म देकर उसे समाज से परिचय कराती है। पिताजी उस बच्चे को सामाजिक शिक्षा प्रदान करता है। इस प्रकार शिशु के पालन-पोषण में माँ-पिताजी, समता एवं ममता सिखाने के भागीदार बनते हैं।

कहीं प्राचीन समय के समाज में मातृस्वामित्व प्रचलित थी। पारिवारिक भरण-पोषण का पूरा दायित्व माता पर ही होता था। माता ही आध्यात्मिक ज्ञान तथा सामाजिक विज्ञान को सिखानेवाली गुरु बनती थी। आज, सामाजिक व्यवस्था में तबादला हुई है। इसके बावजूद यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि अगर स्त्री को ठेस पहुँचती है तो मानवता का संतुलन डगमगा जाती है। आज की युवा पीढ़ी को इस बात का बहुत ध्यान रखना होता है। स्त्री के प्रति का गौरव भाव - देवता के प्रति के गौरव भाव का संकेत है।

आशा करेंगे कि आगामी 'शार्वरी' नामक नया वत्सर (उगादि) हमारी आंतरिक मलिनता को मिटायेगी तथा हमें सही पथ पर ले जायेगी। इच्छा है कि भगवान श्री वेंकटेश्वर स्वामी हम पर निरंतर कृपावृष्टि करते रहेंगे। 'सप्तगिरि' सभी पाठकों को नये वर्ष की शुभकामनाएँ देती है।

हमारे मंदिर

ब्रह्मोत्सव (०२.०३.२०२० से १०.०३.२०२० तक) के संदर्भ में...

श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामीजी का मंदिर, तरिगोंडा

तेलुगु मूल - श्री आई.एल.एन.चन्द्रशेखर राव

हिन्दी अनुवाद - डॉ.जी.मोहन नायुडु
मोबाइल - ९४४१४८०४७३

कलियुग के प्रत्यक्ष देव, भक्तों का आराध्य दैव श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी की भक्तिन मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा का जन्मस्थान तरिगोंडा में उन से सेवित श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामीजी भक्तजनों की मनोकामनाओं की पूर्ति करने वाले के रूप में विख्यात है।

चित्तूर जिला वाल्मीकिपुरम् से छः किलोमीटर की दूरी पर तरिगोंडा गाँव है। प्राचीन काल में इस क्षेत्र का नाम तरिकुंडा था। तरिकुंडा अर्थात् दही को मंथने की मटकी। प्राचीन काल में एक विवाहित स्त्री मटकी में दही का मंथन करते समय उस मटकी में एक मूर्ति के रूप में श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामीजी का आविर्भाव हुआ। इसलिए इस क्षेत्र का नाम तरिकुंडा पड़ा। और कालांतर में वही 'तरिगोंडा' नाम से विख्यात हो गया।

स्थलपुराण

स्थल पुराण के अनुसार प्राचीन काल में यह क्षेत्र वन के रूप में था। यहाँ कुछ लोग आवास बनाकर गाय और भैंसों का पालन-पोषण करते हुए दूध, दही, मट्ठा (छाछ) इत्यादि समीप के गाँवों में बेचकर जीवन-यापन करते थे।

एक दिन सुबह ही एक विवाहित स्त्री दही का मंथन करने लगी तो थोड़ी देर के बाद एक मूर्ति मंथनी को लगी। इसके पहले दिन रात को 'रामनायनिंगारु' नामक सेवक को स्वप्न में नरसिंहस्वामीजी अपना दर्शन देकर बताया और आदेश दिया कि मैं इस गाँव में स्वयंभू के रूप में दर्शन दूँगा, और आप मंदिर का निर्माण कीजिए। छाछ की मटकी में स्वामीजी मूर्ति के रूप में अवतरित विषय को उस स्त्री ने सभी गाँववालों को बताया। यह विषय जहाँ-तहाँ व्याप्त होते हुए उस सेवक तक पहुँचा; और उसने यहाँ मंदिर का निर्माण करावाकर नरसिंहस्वामीजी की मूर्ति को प्रतिष्ठित किया।

मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा से सेवित स्वामी

१८वीं सदी के आरंभ में तरिगोंडा गाँव में कानाल कृष्णय्या और मंगम्मा दंपतियों ने तिरुमल यात्रा की और कुछ दिनों के बाद इन्होंने एक लडकी को जन्म दिया। और उस लड़की का नाम वेंकम्मा रखा। यह लड़की बचपन से ही श्री वेंकटेश्वरजी के प्रति अनन्य भक्ति-भावना दिखाती थी। लेकिन जब वह युवावस्था में पहुँच गयी तो श्रीनिवासजी

को पति समझने लगी। इसको पहचानकर उसके माता-पिता ने 'चलपति' नामक व्यक्ति से अपनी बेटी वेंकम्मा का विवाह करवाया, किंतु वह अपने पति के पास जाने से पहले ही पति फिर भी वेंकम्मा की मृत्यु हुई। श्रीनिवासजी को पति मानकर हमेशा उनकी सेवा करती थी। तरिगोंडा में निर्मित श्री नरसिंहस्वामी मंदिर में जाकर पूजा करती थी। उस मंदिर में श्री हनुमान मूर्ति के पीछे (खाली जगह) बैठकर तपस्या करती थी। कुछ दिनों के बाद वह तिरुमल पहुँची। और उसने तिरुमल में श्री वेंकटेश्वरजी की सेवा करते हुए कई काव्यों की रचना की। उन काव्यों में 'वेंकटाचल माहात्म्यम्' प्रसिद्ध है। हर दिन एकान्त सेवा करते समय मूलमूर्ति को 'मोती का आरति' समर्पित करती थी। नित्य स्वामीजी की सेवा में बिताते हुए सन् १८१७ ई. को श्रावण शुद्ध नवमी के दिन सजीव समाधि हो गई। इस प्रकार तरिगोंडा वेंगमांबा से सेवित भगवान तरिगोंडा श्री लक्ष्मीनरसिंह स्वामीजी है।

मंदिर का इतिहास

मंदिर में तीन शिलालेख इतिहास के लिए साक्षी है। १५५९ शिलालेख में कर वसूल के बारे में बताया गया है। इससे यह पता चलता है कि १५५९ से पूर्व यहाँ मंदिर का निर्माण हुआ। अर्थात् इतिहासकारों का अनुमान है कि १५वीं सदीं से पूर्व ही मंदिर का निर्माण हुआ १८४६, १८६२ के लेखों में पाकशाला, होमशाला, कल्याणमंडप के निर्माणों के बारे में वर्णन मिलता है। वर्तमान में यह मंदिर तिरुमल तिरुपति देवस्थान के अधीन है।

मंदिर की विशेषताएँ

तरिगोंडा गाँव में प्राचीन मार्ग पर श्रीलक्ष्मीनरसिंहस्वामीजी का मंदिर पूर्वाभिमुखी है। मंदिर के प्रधान प्रवेश द्वार के ऊपर तीन मंजिलों वाला गोपुर निर्मित है। विशाल आँगन में प्रधानालय, उपालय दर्शन देते हैं। प्रधान मंदिर के सामने गरुडमंडप, ध्वजस्तंभ, सत्यप्रमाणों का पीठ हैं। सत्यप्रमाण पीठ के पास प्रमाण करके जो व्यक्ति सत्य ही बोलेगा, वह झूठ नहीं बोलेगा, ऐसा विश्वास है। इसलिए इसका नाम 'सत्यप्रमाणक्षेत्र' पड़ा।

प्रधानमंदिर- महामंडप, मुखमंडप, अंतरालय, गर्भालय से युक्त है। मुखमंडप में उत्तराभिमुख से युक्त गर्भालय में श्री हनुमानजी विराजमान है। प्रतीति है कि हनुमानजी के पीछे ही (खाली जगह) बैठकर मातृश्री तरिगोंड वेंगमांबा ने तपस्या की। प्रधान गर्भालय में श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामी चतुर्भुजाओं से आसीन मूर्ति की तरह विद्यमान है। वाम भाग में लक्ष्मीजी को बैठाकर दोनों हाथों में शंख-चक्र और तीसरे में अभयमुद्रा धारण करके और चौथे हाथ से वाम-भाग में बैठी हुई लक्ष्मीजी को पकड़कर दिव्य मनोहर-रूप में भक्तजनों पर करुणा कृपाओं की रेखाओं को प्रसारित करने की तरह श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामीजी आसीन है।

मंदिर के आँगन में प्रधान मंदिर की बाई ओर अलग मंदिर में श्री चेंचुलक्ष्मी और श्री लक्ष्मीदेवी एक ही गर्भालय में एक-दूसरे के पीछे आसीन है। मंदिर में प्रधान गोपुर के पास (मंदिर के आँगन में) श्री तरिगोंडा वेंगमांबा का दर्शन होता है।

उत्सव

तरिगोंडा श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामीजी के ब्रह्मोत्सव हर वर्ष फाल्गुण मास में शुक्ल पक्ष नवमी को आरंभ होकर बहुलपक्ष विदिया तक मनाए जाते हैं। विविध वाहन की सेवाएँ (रथोत्सव, कल्याणोत्सव) बहुत धूम-धाम से होती है। नृसिंह जयंती, धनुर्मास के साथ विविध त्यौहार के समय यहाँ विशेष पूजाएँ होती है। भक्तों की मनोकामनाओं की पूर्ति करने वाले देव, निःसन्तान दंपतियों को सन्तान प्रदाता, अविवाहितों को विवाह योग प्रदान के रूप में पूजित किए जाने वाले तरिगोंडा श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामीजी का दर्शन करके भक्त धन्य होंगे।

तिरुक्कच्चिनंबि
(कांचीपूर्ण स्वामीजी)

- श्री अजय कुमार सरफ
मोबाइल - ९८४४००१४५०

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. ३ मार्च २०२०

अवतार तनियन

कुम्भे मृगशिरो जाता श्री काञ्ची-पूर्णमाश्रये।
षटसूक्तं यतिराजाय यनमुखाद-वरदोवदत।।

तिरुनक्षत्र - मृगशिर नक्षत्र

अवतार स्थल - पूविरुन्तवल्लि

आचार्य - आळवन्दार

परमपद स्थान - पूविरुन्तवल्लि

ग्रंथरचना सूचि - देवराजाष्टकम्

तिरुक्कच्चि स्वामीजी 'कांचीपूर्ण स्वामीजी' के नाम से प्रसिद्ध है। **कांचीपुरी में शबरी के अंश से चतुर्थवर्ण में उत्पन्न कांचीपूर्ण स्वामीजी थे।** वे एक वैश्य परिवार से थे, इनके पिताजी का नाम वीरराघवन, माताजी का नाम कमलम्मा था। इनके चार पुत्रों में कांचीपूर्ण स्वामीजी सबसे छोटे थे। इनका जन्म पूविरुन्तवल्लि में हुवा था। जो कि वर्तमान में चेन्नई में है। कहते है कि अपने पिता से प्राप्त संपत्ति इन्होंने भगवान की सेवा में लग दी थी। वैराग्य जागने से इन्होंने श्रीरंगम् जाकर आळवन्दार स्वामीजी से दीक्षा लेकर भगवान श्रीरंगनाथजी की पंखी से हवा देने की सेवा करना प्रारंभ की।

वरदराज भगवान की विशेष कृपा

एक बार रामानुजाचार्य स्वामीजी को एक घने जंगल में व्याध दंपति के रूप में भगवान मिले। व्याध दंपति को देखकर रामानुजाचार्य ने पूछा आप कौन है? कैसे इधर आये? कहा जा रहे है? भगवान रामानुजाचार्य की वाणी सुनकर व्याध वेषधारी भगवान बोले में सत्यवती क्षेत्र जा रहा हूँ, आप कैसे इस निर्जन हिंसक पशुओं से भरे हुए घनघोर जंगल में घूम रहे है? तब रामानुजाचार्य बोले मैं अपने गुरु के साथ गंगा स्नानार्थ प्रयाग जा रहा था। किंतु कुछ कारण वश यहाँ रूक गया। अब कांची जाना चाहता हूँ। किन्तु मैं अकेला और असहाय हूँ। मेरा कोई साथी नही है। भगवान रामानुजाचार्य की वाणी सुनकर करुणा सागर भगवान ने उन्हें अपने साथ लेकर कांची के लिए प्रस्थान किया। उसी रात को रामानुजाचार्य के साथ जब व्याध दंपति सो रहे थे, तब व्याध पत्नी को प्यास लगी। श्रीरामानुजाचार्य बोले संप्रति में आप लोगों को जल प्रदान

करने में मैं अक्षम हूँ। किन्तु प्रातःकाल होते ही मैं आप लोगों को उत्तम जल प्रदान करुँगा। सवेरा होते ही व्याधरूपधारी भगवान बोले सन्निक में ही जल है। अंजलि में भरकर हमे आप जल दे। तब रामानुजाचार्य तीन अंजलि जल देकर जब चौथीबार जल उठाये तो व्याध दंपति वहाँ नही थे। और तभी रामानुजाचार्य कांचीपुरी के निकट पहुँच गए थे। तब आश्चर्य चकित श्रीरामानुजाचार्य ने अनुमान लगाया कि यह भगवान वरदराज का ही प्रभाव है। फिर रामानुजाचार्य ने यह वृत्तान्त कांचीपूर्ण स्वामीजी को सुनाया, तब वे बोले भगवान वरदराज की आप पर अत्यंत कृपा है इसलिए उन्होंने आपको आपत्ति से बचाया है और आपके हाथों से जल पिने की इच्छा व्यक्त की। इसलिए आप नित्य ही उस कुएँ से जल लाकर भगवान वरदराजजी को समर्पित किया करे।

उनकी आज्ञानुसार रामानुजाचार्य प्रतिदिन उसी कुएँ (शालकूप) से जल लाकर वरदराज भगवान को समर्पित करने लगे और पंखी से हवा देने की सेवा करने लगे। सेवा के समय कांचीपूर्ण स्वामीजी भगवान वरदराजजी से वार्तालाप करते थे।

शालकूप के दर्शन आज भी वहाँ देख सकते हैं।

तरीप्रसाद का महत्व

एक बार रामानुजाचार्य कांचीपूर्ण स्वामीजी के तरीप्रसाद की अभिलाषा से उन्हे अपने यहाँ प्रसाद पाने के लिये आग्रह किये। कांचीपूर्ण स्वामीजी ने निमंत्रण स्वीकार किया। रामानुजाचार्य घर पर नही थे। तभी कांचीपूर्ण स्वामीजी आये और रामानुजाचार्य की पत्नी श्रीमती रक्षकाम्बा को विनंती करके जल्दी प्रसाद पाकर चले गये।

श्रीमती रक्षकाम्बा बचा हुवा भोजन नौकर को देकर पुनः स्नान करके रामानुजाचार्य के लिए दूसरा भोजन बनाने लगी। रामानुजाचार्य आये और उन्हें पता चला की रक्षकाम्बा ने कांचीपूर्ण स्वामीजी के शूद्र वर्ण को देखकर ऐसा किया तो वे अतिदुःखी हुवे। क्योंकि उन्हें कांचीपूर्ण स्वामीजी का तरीप्रसाद नही मिला। उस दिनसे रामानुजाचार्य ने अपनी पत्नी का त्याग कर दिया।

रामानुजाचार्य कांचीपूर्ण स्वामीजी के पास जाकर निवेदन किये की वे उन्हें पंचसंस्कारित करे याने अपना शिष्य बना ले। जिसे कांचीपूर्ण स्वामीजी ने अपने वर्ण के कारण अस्वीकार किया।

तब रामानुजाचार्य ने कांचीपूर्ण स्वामीजी को ४ प्रश्न पूछे -

१) उज्जीवन के लिये सर्वश्रेष्ठ उपाय क्या है?

२) अन्तिम समय में भगवत् स्मरण आवश्यक है की नहीं?

३) मोक्ष प्राप्ति कब होती है?

४) मैं किन आचार्य का समाश्रयण करुँ?

कांचीपूर्ण स्वामीजी ने एकांत में पंखीसेवा करते हुये वरदराज भगवान से ये प्रश्न पूछने पर भगवान ने उत्तर दिया :

१. मैं ही परम तत्व और जगत के कारणों का कारण हूँ।

२. जीव और ईश्वर में भेद सिद्ध है।

३. मोक्ष के लिये भगवत् शरणागति सर्वश्रेष्ठ उपाय है।

४. मुझे अपने (शरणागत) भक्तों से अंतिम स्मृति की अपेक्षा नही।

५. देह त्याग करने पर मैं अपने (शरणागत) भक्तों को परमपद देता ही हूँ।

६. श्रीरामानुजाचार्य श्री महापूर्णाचार्य स्वामीजी का समाश्रयण करें।

कांचीपूर्ण स्वामीजी के मुख से श्री वरदराज भगवान की छः वाक्य आज्ञा सुनकर प्रसन्न रामानुजाचार्य तुरंत श्री महापूर्णाचार्य स्वामीजी द्वारा पंचसंस्कार ग्रहण करने की इच्छा से श्रीरंगम के लिये प्रयाण किये।

श्री कुलशेखर स्वामीजी

- श्रीमती अनिता रमाकांत दरक
मोबाइल - ९४४९१८३६११

तिरुनक्षत्र - माघ मास,
पुनर्वसु नक्षत्र

अवतार स्थल - तिरुवंजिक्कलम

आचार्य - श्री विष्वक्सेनजी

ग्रन्थ रचना - मुकुंद माला, पेरुमाळ तिरुमोळि

परमपद प्रस्थान प्रदेश - मन्नार कोयिल (तिरुनेल्वेलि के पास)

तनियन

कुम्भे पुनर्वसौ जातं केरले चोलपट्टने।
कौस्तुभांश धराधीशं कुलशेखरमाश्रये।।

घुष्यते यस्य नगरे रङ्गयात्रा दिने दिने।
तमहं शिरसा वन्दे राजानं कुलशेखरम्।।

जैसे राजा दशरथ के घर में भगवान श्रीराम का अवतार हुवा, वैसे ही राजा दृडव्रत के घर में माघ मास के शुक्ल पक्ष में पुनर्वसु नक्षत्र को भगवान के कौस्तुभ मणि के अंशरूप महात्मा कुलशेखर का अवतार हुवा। राजा ने अपने कुलभूषण अमित तेजस्वी बालक का नाम कुलशेखर रखा। इस बालक ने सभी विद्याओं का अध्ययन किया और पिता के आदेशानुसार राज्य सिंहासन पर प्रतिष्ठित हुवे। भगवान श्रीराम ने जिस प्रकार पृथ्वी पर शासन किया था, उसी प्रकार धर्मपूर्वक राजा कुलशेखर अपना राज्यकार्य चलाने लगे।

भोगविभूति और लीलाविभूति के निर्वाहक करुणासागर भगवान ने अपने अहैतुक कृपावेश के कारण राजा कुलशेखर के लिये तमोगुण को छोडकर एकमात्र सत्वगुण प्रधान ज्ञान उनको प्रदान किया। भगवान का अनुशासन प्राप्त करके पृथ्वी पर अवतरित श्री विष्वक्सेनजी ने राजा कुलशेखर को पंचसंस्कारों से संस्कृत किया।

जिस प्रकार अग्नि की ज्वाला में प्रवेश कर उसमें निवास करना आत्मा के लिये सर्वथा दुःसह है। उसी प्रकार भगवान के दासस्वरूप एवं श्रीहरि में संलग्न मेरे लिये सांसारिक मनुष्यों के साथ रहना भी अत्यन्त दुःसह है। महात्मा कुलशेखर ने ऐसा निश्चय करके देह की ममता में बंधे हुए मनुष्यों का साथ छोडकर भगवान के अधीन रहनेवाले राज्य को उनके कैंकर्य में उपयोगी बनाया और फिर स्वयं भगवान श्रीराम की शरणागति प्राप्त की।

भगवान श्रीमन्नारायण के अर्चावतारों में श्रीवेंकटेशजी तथा विभवशालियों में भगवान श्रीराम के विषय में राजा कुलशेखर की परम भक्ति थी। उन्होंने श्रीवेंकटेश भगवान से सेवापूर्वक यह प्रार्थना की कि - ''हे नाथ! आपके मन्दिर में सोपान बनकर रहूँ।''

श्री कुलशेखर स्वामीजी सदैव महात्मा श्रीवैष्णवों से भगवान गुणानुवाद सुनते थे। एक बार भगवान श्रीरंगनाथ के नित्य निवास श्रीरंगक्षेत्र की महिमा को सुनकर राजा कुलशेखर ने श्रीरंगधाम की

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. ५ मार्च २०२०

यात्रा करने का निश्चय किया और मन में विचार करने लगे कि- पुत्र, धन, परिवार, प्राकृतिक वस्तुएँ अनित्य है। इसलिये मुझे अब श्रीरंगपुरी में भगवान श्रीरंगनाथ की नित्य सौख्य प्रदान करने वाली सेवा करनी चाहिये। ऐसा निश्चय करके उन्होंने श्रीरंगधाम जाकर श्रीरंगनाथ भगवान का कैंकर्य और वहां की नित्य निवास की घोषणा कर दी। इस घोषणा से उनके मंत्रियों ने दुखित होकर श्रीवैष्णवों से उन्हें यह यात्रा स्थगित करने की प्रार्थना कि।

मंत्रियों की प्रार्थना सुनकर श्रीवैष्णव महात्मा जिस समय राजा यात्रा के लिये प्रस्थान करने वाले थे, उस समय वें सभी उनके सामने आये और राजा के द्वारा साष्टांग प्रणाम करने के पश्चात शुभाशीर्वाद दिया। राजा ने सोचा - **''श्रीवैष्णव भागवतों का कैंकर्य करना ही सबसे बड़ा पुरुषार्थ है।''** और भगवत सेवा का माहात्म्य जानने वाले राजा कुलशेखर ने अपना श्रीरंग यात्रा का विचार स्थगित कर दिया और उन समस्त श्रीवैष्णवों को साथ लेकर वह अपने राजप्रसाद में वापस आ गये। वापस आकर श्रीवैष्णवों का उचित सत्कार और तदियाराधन किया।

इस प्रकार मंत्रियों के द्वारा प्रेरित प्रतिदिन आने वाले श्रीवैष्णवों के स्वागत एवं सेवा में व्यस्त रहने वाले राजा कुलशेखर की श्रीरंगयात्रा प्रतिदिन रुकती चली गयी और श्रीवैष्णवों का कैंकर्य करते हुए उनके अधीन रहकर बहुत समय तक राज्य कर अपनी प्रजा का पुत्रवत पालन किया।

एक समय में धर्मात्मा राजा कुलशेखर ने श्रीवैष्णव के मुख से श्रीवेंकटाचल का माहात्म्य सुनकर लोककल्याण के लिये **''मुकुन्द माला''** स्तोत्र कि रचना कि।

श्री वाल्मीकिरामायण में भगवान श्रीराम का पावन चरित्र सुनकर महात्मा कुलशेखर भगवान राम के चरणारविन्दों में भक्तिमान हो गये और प्रतिदिन रामायण की कथा श्रवण करने में अपना समय यापन करने लगे। एक समय कथा सुनते सुनते अरण्य कांड में खरदूषण के साथ जब भगवान राम युद्ध का प्रसंग आया तब चौदह हजार राक्षसों की विशाल सेना और उनके सन्मुख अकेले भगवान राम को खड़े सुनकर राजा कुलशेखर क्रोधित हो उठे और तत्काल भगवान श्रीराम के प्रेम में लीन होकर चतुरंगी सेना को साथ लेकर भगवान राम कि सहायता के लिये शीघ्र चलने का निश्चय किया। राजा के इस असामयिक निर्णय को समझकर भगवान श्रीराम द्वारा विशाल सेना का विनाश कर उनके विजय का वृत्तांत सुनाया उक्त विजय के पावन प्रसंग को सुनकर रामभक्त राजा कुलशेखर ने अपनी सेना को लौट आने का आदेश दिया।

राजर्षि कुलशेखर को भगवान श्रीराम एवं श्रीवैष्णवों के प्रति अनन्य भक्ति थी। इनकी भक्ति अतुलनीय थी और वे हरिभक्तों के पराधीन थे। उनकी सन्निधी में सदा श्रीवैष्णव रहते थे। यदि उनके समीप कोई अवैष्णव आ भी जाते तो वह तत्काल श्रीवैष्णव बन जाते। एक बार आवश्यक कार्य में संलग्न होने के कारण राज्य पुरोहित कथा सुनाने के लिये नहीं आये और अपने पुत्र को भेज दिया। राजा कुलशेखर के राम भक्ति से अपरिचित होने के कारण उन्होंने सीता हरण कि कथा विस्तारित रूप से सुनाना प्रारम्भ किया। माता सीता को कष्ट में देखकर

लंका पूरी और रावण को नष्ट करने के लिये सेना के साथ स्वयं तलवार और धनुष बाण लेकर आगे बढ़ते हुए समुद्र में प्रवेश कर लंका की और बढ़ने लगे। भक्ताधीन करुणा सागर भगवान श्रीराम अपने भक्त की यह अद्भुत लीला देखकर तत्काल उनके सन्मुख प्रगट हो गये और कहने लगे कि- ''हे पुत्र! मेरे रहते हुए तुमने ऐसा श्रम उठाया, यह तुम्हारे लिये उचित नहीं है। मैं युद्ध में रावण का विनाश करके जानकी को वापस ले आया हूँ।'' यह कहकर भगवान श्रीराम ने जानकीजी को उनके समक्ष उपस्थित कर दिये। राम, लक्ष्मण और माता सीता के दर्शन कर राजा कुलशेखर बहुत प्रसन्न हुए और सेना सहित भगवान के साथ अपने नगर की ओर प्रस्थान किया। बाद में भगवान अंतर्ध्यान हो गये। भगवान को न देखकर अत्यन्त दुखित हुए परंतु क्षण भर में संपूर्ण परिस्थिति को समझकर सेना सहित नगर में आ गये।

श्री कुलशेखर स्वामीजी अपना समस्त राजपाठ श्रीवैष्णव महात्माओं के ही अधीन करके स्वयं तो भगवद भागवत आचार्य के दास स्वरूप बनकर उनका गुणानुभाव करते हुये ही अपना समय व्यतीत करते थे। मंत्रियों ने देखा कि स्वामीजी भोजन, सोते समय सदैव श्रीवैष्णवों से ही घिरे रहते है और वें प्रजा का पालन करने में असमर्थ हो रहे है तब मंत्रियों ने एक योजना बनाई। जब स्वामीजी स्नान के लिये जाते समय अपने आभूषण वही सिंहासन पर रख कर चले गये तब उन्होंने आभूषणों की चोरी की। तदियाराधन के बाद आभूषण वहा पर न दिखने पर उसके बारे में मंत्रियों को पूछा तो उन्होंने चोरी का इल्जाम श्रीवैष्णवों पर लगाया। मंत्रियों के मुख से श्रीवैष्णवों की निन्दा और उनके ऊपर मिथ्या आक्षेप के पापमय वचन सुनकर राजा कुलशेखर ने मन ही मन में उनको दंड देने का निश्चय करके कहा- ''संसार में जो भी पाप है वह भगवान श्रीमन्नारायण के नामस्मरण से मिट जाते है और भगवान की निन्दा करने से जो पाप उत्पन्न होते है वो श्रीवैष्णव महात्माओं की स्तुति करने से नष्ट हो जाते है। किन्तु श्रीवैष्णवों की निन्दा करने से जो पाप उत्पन्न होते है, वे किसी भी यत्न के द्वारा नहीं मिट सकते। अतः श्रीवैष्णवों की जो तुम लोगों ने निन्दा की

है इस अपराध के कारण आज मैं तुम लोगों को दंडित करता हूँ।'' और श्रीवैष्णव की निर्मलता को प्रमाणित करने के लिये राजा कुलशेखर ने एक भयंकर सर्प को मिट्टी के घड़े में रखकर राज्य सभा में मंगवाया और सबको संबोधित करके कहा- ''श्रीवैष्णव महात्मा मुक्ति और भुक्ति से निष्पृह हैं, वे चोर कदापि नहीं है। इस बात को अब मैं आपके सन्मुख सत्य प्रमाणित कर रहा हूँ। यदि वें महात्मा निर्दोष है तो यह विषैला सर्प मुझे नहीं डसेगा।'' ऐसा कह उन्होंने घड़े का ढक्कन उठाकर अपना हाथ उसके अन्दर डाल दिया। राजा ने घड़े में रखे सर्प का अपने हाथों से बार बार स्पर्श किया, लेकिन उस विषैले सर्प ने राजा के हाथ को छुआ तक नहीं।

तत्पश्चात सभी देवताओं के साथ भगवान श्रीराम वहाँ प्रगट हो गये। भगवान ने अपने कृपा कटाक्ष से राजा को देखते हुए उनसे कहा कि - ''राजन! आप कि श्रीवैष्णव भागवत निष्ठा से अत्यन्त प्रसन्न हूँ।'' यह कहकर भगवान ने उन्हें प्रेमालिंगन किया और वर

माँगने के लिये कहा। तब राजा ने हाथ जोड़कर भगवान से निवेदन किया कि - ''हे प्रभो! आपकी पूर्ण कृपा से दास के पास किसी वस्तु की कमी नहीं है। फिर भी यदी आपकी वर प्रदान करने की इच्छा है तो यही एकमात्र वर दीजिये कि दास की श्रद्धा भक्ति सदैव आपके चरणकमलों में बनी रहे।'' भगवान ने श्री कुलशेखर स्वामीजी पर प्रसन्न होकर उन्हें वर प्रदान कर उनकी पुत्री के साथ पाणीग्रहण संस्कार कर अपने धाम लौट गये। इस अद्भुत चरित्र को देख मंत्रियों ने भयभीत होकर अपनी गलती को माना और आभूषण लौटा दिया।

मंत्रियों को क्षमा कर श्री स्वामीजी पुनः श्रीवैष्णव तदियाराधन में समय व्यतीत रहने लगे। एक बार राजा रामनवमी के पुण्य महोत्सव पर भगवान श्रीराम के तिरुमंजन अभिषेक की तैयारी में संलग्न थे। भगवान के सब आभूषण उतार कर एक तरफ रख दिये थे। जब तिरुमंजन के बाद शृंगार का समय आया तो राजा कुलशेखर ने देखा कि भगवान का एक बहुमूल्य मोतियों का हार गायब है। जब बहुत खोज की गई तो मंत्रियों ने पुनः हार चुराने का आक्षेप श्रीवैष्णव महात्माओं पर लगाया। यह सुनते ही राजा ने फिर पहले के समान भागवत निन्दा को महान पाप बताते हुये भगवत कृपा से ऐसा चमत्कार दिखाया कि मंत्रियों ने तत्काल हीं हार लाकर उनके समक्ष रख दिया और अपने अपराधों के लिये क्षमा याचना की। इस घटना को देखकर उनके साथ रहना अब उचित नहीं है ऐसा मानकर राज्य का कार्यबार अपने पुत्र को सौंपकर स्वामीजी श्रीरंगम चले गये। श्रीरंगनाथ भगवान के दर्शन कर आनंदित होकर उन्होंने **पेरुमाळ तिरुमोळि** नामक दिव्यप्रबन्ध की रचना की। जिसमें १०५ गाथाएँ और सात दिव्यदेशों का मंगलाशासन है। इस ग्रंथ के चौथे दशक में श्री कुलशेखर स्वामीजी नानाविध जन्म पाने की प्रार्थना करते है। जैसे

१) वेंकटाद्रि के पुष्करिणी में पक्षी का जन्म मांगते है।

२) परंतु पक्षी उड़ कर बाहर जा सकता हैं, इसीलिए मछली का जन्म मांगते है जो बाहर नहीं जा सकती।

३) परंतु जल सुख सकता है इसीलिए भगवान की सेवा में एक सोने की पात्र पकड़ने वाले एक सेवक बन जाऊ तो मंदिर में प्रवेश कर सकु।

४) परंतु सोने की पात्र पकड़ने से मन में अहंकार पैदा हो सकता हैं और कदाचित अपचार के कारण उन्हें दूर कर सकता इसीलिए एक पेड़ का जन्म मांगते है।

५) परंतु एक निरुपयोगी पेड़ होने के कारण उखाड़ लिया जा सकता है इसीलिए एक पहाड का जन्म मांगते है जिसे दूर हटा नहीं सकते।

६) परंतु महल मंदिर बनाने वाले शीला के लिए पहाड तोड सकते है इसीलिए तिरुवेंकट पर्वत पर एक नदी होने के लिए प्रार्थना करते है।

७) परंतु नदी कभी भी सूख सकती हैं इसीलिए सन्निधि का रास्ता होने के लिए प्रार्थना करते है।

८) परंतु रास्ता बदला जा सकता हैं इसीलिए सन्निधि में द्वार का जन्म मांगते है जो हमेशा के सामने ही ठहरकर सदा भगवान के मुखारविंद के दर्शन करते रहे। इसी प्रार्थना के अनुसार श्रीवेंकटाद्रि में भगवान के सामने रहने वाली द्वार को 'कुलशेखर पडी' कहते है। केवल श्रीवेंकटाद्रि में ही नहीं परंतु सभी दिव्यदेशों में भगवान के सामने स्थित द्वार को **कुलशेखर पडी** कहते है।

कुछ समय श्रीरंगम में निवास करने के पश्चात श्री कुलशेखर स्वामीजी ने समस्त श्रीवैष्णव मंडली के साथ दक्षिण के अनेकों दिव्यदेशों की यात्रा और वहाँ स्थित भगवान का कैंकर्य करने के बाद कुरुका नगर के 'ब्रह्मदेश' नामक स्थान पर आये। यहाँ अधिष्ठाता श्रीराजगोपाल भगवान को प्रणाम कर उनके वशीभूत हो ६७ वर्षों तक यहाँ सुख पूर्वक निवास किया। पांड्यदेश स्थित इस ब्रह्मपुर नामक स्थान पर ही उन्होंने श्रीराजगोपाल भगवान की सन्निधी में परमपद की प्राप्ति की।

श्री धनुर्दास स्वामीजी

- श्री गिरिधर गोपाल वी. दरक
मोबाइल - ९७५१३५८२००

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. ७ मार्च २०२०

तिरुनक्षत्र - माघ, अश्लेषा नक्षत्र

अवतार स्थल - उरैयूर

आचार्य - श्रीरामानुज स्वामीजी

स्थान जहाँ परमपद प्राप्त किया - श्रीरंगम

पिल्लै उरंगा विल्ली दासर एक महान पहलवान थे और अपनी पत्नी पोंन्नाच्चियार (हेमाम्बा) के साथ उरैयूर में रहते थे। वे अपनी पत्नी की सुंदरता (विशेषतः उनके सुंदर नेत्रों) की वजह से उनसे बहुत प्रेम करते थे। मूलतः उन्हें धनुर्दास नाम से जाना जाता है। वे बहुत धनी थे और उनकी बहादुरी के लिए राज्य में उनका बहुत सम्मान था।

एक बार श्रीरामानुज स्वामीजी अपने शिष्यों के साथ मार्ग से जाते हुए देखते हैं कि धनुर्दास पोंन्नाच्चियार (हेमाम्बा) के आगे आगे एक हाथ में छाता लेकर उसे धूप से बचाते हुए और एक हाथ में उसके आराम के लिए जमीन पर कपड़ा लिए हुए उसके सामने चल रहे थे। श्रीरामानुज स्वामीजी धनुर्दास के एक स्त्री के प्रति ऐसे लगाव को देखकर अचंभित रह जाते हैं और उन्हें अपने पास बुलाते हैं। श्रीरामानुज स्वामीजी उनसे पूछते हैं कि वे उस स्त्री की ऐसी सेवा क्यों कर रहे हैं? धनुर्दास कहते हैं कि उसके नेत्र बहुत ही सुंदर है और वह उसकी सुंदरता के प्रति पूरी तरह से समर्पित हैं और उसकी रक्षा के लिए कुछ भी कर सकते हैं। श्रीरामानुज स्वामीजी धनुर्दास से कहते हैं कि अगर वे उन्हें उनकी पत्नी के नेत्रों से भी सुंदर नेत्र दिखा दे तो क्या वे इसी तरह उनके समक्ष समर्पित हो जायेंगे और उनकी रक्षा करेंगे? धनुर्दास तुरंत उसे स्वीकार करते हैं और कहते हैं कि वे उन अत्यंत सुंदर तत्त्व के समर्पित हो जायेंगे। श्रीरामानुज स्वामीजी उन्हें श्रीरंगनाथ भगवान के समक्ष ले जाते हैं और उनसे प्रार्थना करते हैं कि वे धनुर्दास को उन्ही सुंदर नेत्रों का दर्शन कराये जो उन्होंने श्रीपरकाल स्वामीजी को दिखाए थे। भगवान के नेत्र प्राकृतिक रूप से सबसे सुंदर है और उन्हें देखकर धनुर्दास को अनुभव होता है कि उन्हें वास्तविक सुंदरता मिल गयी है। वे तुरंत श्रीरामानुज स्वामीजी के शरण हो जाते हैं और उनसे उन्हें अपना शिष्य बनाने की प्रार्थना करते हैं। उनकी पत्नी भी भगवान और श्रीरामानुज

स्वामीजी की महानता को समझकर श्रीरामानुज स्वामीजी के शरण हो जाती है और उनसे मार्गदर्शन की विनंती करती है। दंपति अपने सारे व्यामोह छोड़कर श्रीरंगम में निवास के लिए आ जाते हैं और श्रीरामानुज स्वामीजी व भगवान के चरण कमलों की सेवा करने लगते हैं। भगवान धनुर्दास पर बहुत कृपा करते हैं और क्योंकि वे भगवान की सेवा पूजा लक्ष्मणजी के समान किया करते थे, जो श्रीराम के वनवास के समय कभी नहीं सोये, वे श्रीपिल्लै उरंगा विल्ली दासर नाम से प्रसिद्ध हुए।

श्री धनुर्दास स्वामीजी और पोंन्नाच्चियार (हेमाम्बा) का श्रीरामानुज स्वामीजी से बहुत लगाव था। वे श्रीरंगम में श्रीरामानुज स्वामीजी और भगवान की सेवा करते हुए अपना जीवन व्यतीत करने लगे। एक बार नम्पेरुमाल के तीर्थवारी (उत्सव के समापन दिवस पर), मंदिर की टंकी पर चढ़ते हुए श्रीरामानुज स्वामीजी श्री धनुर्दास स्वामीजी का हाथ पकड़ते हैं। इस पर कुछ शिष्य सोचते हैं कि श्रीरामानुज स्वामीजी जैसे सन्यासी के लिए धनुर्दास (उनके वर्ण के कारण) का हाथ पकड़ना ठीक नहीं है। वे सब इस बात को श्रीरामानुज स्वामीजी के सामने रखते हैं और श्रीरामानुज स्वामीजी एक सुंदर द्रष्टांत द्वारा श्री धनुर्दास स्वामीजी और पोंन्नाच्चियार के गौरव को स्थापित करते हैं।

श्रीरामानुज स्वामीजी उन शिष्यों को श्री धनुर्दास स्वामीजी के घर जाकर उनकी पत्नी के गहने चुराकर लाने के लिए कहते हैं। वे सब श्री धनुर्दास स्वामीजी के घर जाते हैं और देखते हैं की पोंन्नाच्चियार सो रही थी। वे चुपके से उनके पास जाते हैं और उनके शरीर पर जो भी गहने थे उन्हें उतारने का प्रयत्न करते हैं। पोंन्नाच्चियार यह जानकर की ये श्रीवैष्णव कुछ चुराने की कोशिश कर रहे हैं और यह सोचकर की वे ऐसा अपनी निर्धनता के कारण कर रहे हैं वह उन्हें आसानी से गहने उतारने देती है। जब वे एक तरफ के गहने निकाल लेते हैं तो पोंन्नाच्चियार दूसरी तरफ के गहने उतारने के लिए करवट बदलती है, जिससे वे लोग आसानी से दूसरी ओर के गहने निकाल सके। परन्तु इससे वे लोग सतर्क हो जाते हैं और डरकर वहाँ से भाग जाते हैं और श्रीरामानुज स्वामीजी के पास लौट आते हैं। इस द्रष्टांत को सुनने के बाद श्रीरामानुज स्वामीजी उन्हें श्री धनुर्दास स्वामीजी के घर जाकर वहाँ का हाल जानने को कहते हैं। वे वहाँ जाकर देखते हैं कि श्री धनुर्दास स्वामीजी घर पर आ गये और पोंन्नाच्चियार से बात कर रहे हैं। वे उनसे एक तरफ के गहने नहीं होने का कारण पूछते हैं। पोंन्नाच्चियार बताती है कुछ श्रीवैष्णव गहने चुराने के लिए आये थे और उन्होंने मुझे सोया हुआ जानकर एक तरफ के गहने उतार लिए तब मैंने दूसरी तरफ निकालने के लिए करवट ली पर वे चले गये।

यह जानकर श्री धनुर्दास स्वामीजी बहुत दुःखी होते हैं और पोंन्नाच्चियार से कहते हैं कि उन्हें पत्थर के समान लेटे रहना चाहिए था जिससे वे लोग जैसे चाहे गहने निकाल सकते थे और करवट बदलकर उन्होंने श्रीवैष्णवों को भयभीत कर दिया। वे दोनों ही इतने महान थे कि उनसे चोरी करने वालों की भी वे सहायता ही करना चाहते थे। सभी श्रीवैष्णव श्रीरामानुज स्वामीजी के पास लौटते हैं और उन्हें पूरी घटना बताते हैं और उस दंपति की महानता स्वीकार करते हैं। अगली सुबह श्रीरामानुज स्वामीजी सारी घटना श्री धनुर्दास स्वामीजी को बताते हैं और उनके गहने उन्हें लौटा देते हैं।

श्री धनुर्दास स्वामीजी, श्री विदुरजी और श्रीविष्णुचित्त स्वामीजी के समान भगवान के प्रति अपने अत्यंत लगाव के कारण ''महामती'' (अत्यंत विवेकशील) के नाम से प्रसिद्ध हुए। पूर्वाचार्यों की रचनाओं में कई द्रष्टांतों में पोंन्नाच्चियार (हेमाम्बा) के निष्कर्ष दर्शाये गये हैं, जो बताते हैं कि उनको शास्त्रों में बहुत जानकारी थी।

पूर्वाचार्यों की रचनाओं में बहुत से स्थानों पर श्री धनुर्दास स्वामीजी और उनकी पत्नी से संबंधित कई वृत्तांत प्रस्तुत किये गये हैं।

हम उनमें से कुछ यहाँ देखेंगे

१) ६००० पद गुरुपरंपरा प्रभाव-एक बार श्रीरामानुज स्वामीजी विभीषण की शरणागति पर व्याख्यान कर रहे थे। उस गोष्ठी में से श्री धनुर्दास स्वामीजी उठकर पूछते हैं ''अगर विभीषण (जिन्होंने सर्वस्व त्याग किया) को स्वीकार करने के लिए श्रीराम लम्बे समय तक सुग्रीव और जामवंत से विचार विमर्ष करते हैं, तो मैं जो परिवार के मोह में पड़ा हुआ हूँ, उसे मोक्ष की प्राप्ति कैसे होगी?'' श्रीरामानुज स्वामीजी कहते हैं - ''अगर मुझे मोक्ष प्राप्त होगा तो तुम्हें भी होगा; अगर श्रीमहापूर्ण स्वामीजी को मोक्ष प्राप्त होगा तो मुझे भी होगा; अगर श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी को मोक्ष प्राप्त होगा तो महापूर्ण स्वामीजी को भी होगा; इस तरह यह कड़ी गुरुपरंपरा माला में ऊपर तक जाएगी। क्योंकी श्रीशठकोप स्वामीजी ने घोषणा की है कि उन्हें मोक्ष प्राप्ती हुई है और क्योंकी श्रीमहालक्ष्मीजी इस बाबत् भगवान से हमारे लिए अनुशंसा करती है, हम सभी को मोक्ष की प्राप्ति होगी। जिन्हें भागवत शेषत्व प्राप्त है उनकी मुक्ति निश्चित है - जैसे वे चार राक्षस जो विभीषण के साथ आए थे जिन्हें श्रीराम ने विभीषण के संबंध से स्वतः ही संसार बंधन से छुड़ा दिया।''

२) पेरिय तिरुमोली में - श्रीपेरियवाच्चान पिल्लै की व्याख्यान - भगवान के प्रति श्री धनुर्दास स्वामीजी के ममत्व को यहाँ दर्शाया गया है। श्रीरंगनाथ भगवान की सवारी के दौरान श्री धनुर्दास स्वामीजी, सावधानी से भगवान को देखते हुए उनके सन्मुख चला करते थे और अपने हाथों को तलवार पर रखते थे। यदि नम्पेरुमाल को जरा सा भी झटका लग जावे तो वे तलवार से स्वयं को मार लेते (क्योंकी उन्होंने स्वयं को नहीं मारा, हम समझ सकते हैं कि वे नम्पेरुमाल को अत्यंत ध्यान से ले जाया करते थे)। इस विशेष ममत्व के कारण, श्री धनुर्दास स्वामीजी को ''महामती'' कहते थे। यहाँ ज्ञानी/बुद्धिमान होने से आश्रय, भगवान के कल्याण के लिए चिंतित होने से है।

तिरुविरुथ्थम - श्री कलिवैरिदास स्वामीजी कि व्याख्यान - जब भी श्रीकुरेश स्वामीजी श्रीसहस्रगीति का व्याख्यान आरम्भ करते थे, श्री धनुर्दास स्वामीजी बहुत भावुक हो जाते थे और श्रीकृष्ण चरित्र के आनंद में मग्न हो जाते थे। उसे देखकर श्रीकुरेश स्वामीजी श्री धनुर्दास स्वामीजी की बहुत प्रशंसा करते हैं। वे कहते हैं कि ''हम भागवत विषय का ज्ञान प्राप्त करके उसे दूसरों को समझाने का प्रयास करते हैं, परन्तु आप हमारे समान न होकर भगवान के ध्यान में भाव विभोर हो जाते हैं, आपका स्वभाव अत्यंत प्रशंसनीय है।'' श्रीकुरेश स्वामीजी स्वयं भगवान के ध्यान में द्रवित हो जाया करते थे - यदि वे श्री धनुर्दास स्वामीजी के बारे में ऐसा कहते हैं तो हम उनकी महानता को समझ सकते हैं।

क्रमशः

मणक्काल्नंबि

(श्रीराममिश्र स्वामीजी)

- श्री हर्षित मर्दा
मोबाइल - ९७६७१७१४८८

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. ८ मार्च २०२०

तिरुनक्षत्र - कुम्भ मास, मघा नक्षत्र

अवतार स्थल - मणक्काल

(श्रीरंगम के पास कावेरी नदी के तट पर स्थित एक छोटा सा गाँव मणक्काल)

आचार्य - उय्यकोण्डार (श्री पुंडरीकाक्ष स्वामीजी)

शिष्य - आळवन्दार, तिरुवरंगपेरुमाळ् अरयर् (आळवन्दार के पुत्र), देवतुक्करसु नंबि, पिळ्ळै अरसु नंबि, सिरु पुळ्ळूरुडैयार् पिळ्ळै, तिरुमालिरुन्चोलै दासर, वंगिपुरत्तु आय्चि।

मणक्काल्नंबि, श्रीराममिश्र नाम से भी जाने जाते है। इनका जन्म मणक्काल नामक एक छोटे गाँव में हुआ। इनकी ख्याति संप्रदाय में मणक्काल्नंबि के नाम से हुई। अपने आचार्य (श्री पुंडरीकाक्ष स्वामीजी) की सेवा में बारह वर्ष रहे। इन बारह वर्षो के मध्य उनके आचार्य की पत्नी का परमपद प्रस्थान हुआ। उसके पश्चात मणक्काल्नंबि ने स्वयं अपने आचार्य के तिरुमाली और परिवार कि देख-रेख की जिम्मेदारि संभाली।

अपनी आचार्य निष्ठा और घर परिवार की जिम्मेदारी सँभालने का परिचय देते हुए, एक घटना बहुत चर्चित है। एक बार आचार्य श्री पुंडरीकाक्ष स्वामीजी की पुत्रियाँ कावेरी नदी के तट से वापस आ रहीं थी, तब रास्ते में कीचड़ के कारण वह आगे नहीं बढ़पाती और वही रुकजाति है। यह देख श्रीराममिश्र स्वामीजी छाती के बल कीचड़ पर लेट जाते और अपने आचार्य की पुत्रियों को अपनी पीठ पर चलते हुए कीचड़ पार करने को कहते है। उनके आचार्य श्री पुंडरीकाक्ष स्वामीजी को जब इस घटना का वृत्तांत मिला, तब वह मणक्काल्नंबि की आचार्य चरणों में भक्ति और जिम्मेदारी वहन करने की क्षमता को देख अत्यंत ही प्रसन्न हुए और श्रीराममिश्र स्वामीजी से पूछा - हे श्रीराममिश्र स्वामीजी! क्या इच्छा है तुम्हारी - यह पूछने पर श्रीराममिश्र स्वामीजी कहते है - निरंतर मैं आप की सेवा में तत्पर रहूँ बस यही मेरी इच्छा है।

श्री पुंडरीकाक्ष स्वामीजी अति प्रसन्न होकर श्रीराममिश्र स्वामीजी को द्वयमहामंत्र का उपदेश फिर से करते है। (संप्रदाय में ऐसी मान्यता है की जब श्रीवैष्णवाचार्य प्रसन्न होते है तब वे अपने शिष्य को द्वयमहामंत्र का उपदेश फिर से करते है)।

श्री पुंडरीकाक्ष स्वामीजी अपने अंतकाल में श्रीराममिश्र स्वामीजी को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करते है और श्रीराममिश्र स्वामीजी को अपने अंतिम उपदेश में नाथमुनि स्वामीजी को दिए वचनानुसार उनके पौत्र, ईश्वरमुनि के पुत्र यामुनाचार्य को सन्मार्ग में प्रशिक्षण देकर, हमारे सत्सांप्रदाय का उत्तराधिकारि नियुक्त करने को कहते है।

ईश्वरमुनि के यहाँ यमुनैतुरैवर् का जन्म होता है, श्रीराममिश्र स्वामीजी, यमुनैतुरैवर् की संप्रदायानुसार पंच संस्कार दीक्षा संपन्न करवाते है (संप्रदाय रिवाजानुसार शंख चक्र प्रदान करना) यानि पंच संस्कार, शिशु के

नामकरण संस्कार (जो ग्यारहवें दिन पर होता है) के समय पर भी किया जाता था। उस काल में बाल्य काल में ही शिशु को तिरुमंत्र का उपदेश देकर, उसका गोपनीय अर्थ समझने की मनन करने की बात समझाते थे, जब बालक यौवन अवस्था को प्राप्त करता था, तब उसे भगवान की मूर्ति / शालग्राम की आराधना सिखाई जाती थी (तिरुवाराधनम्)।

यमुनैतुरैवर बचपन से ही अति कुशाग्र बुद्धि के धनि थे प्रतिभाशालि और बुद्धिमान भी थे, इसी कारण वह आळवन्दार (माने जो रक्षा करने के लिए आये हो) नाम से जाने गए है, अपनी इसी प्रतिभा के बल पर कोलाहल पंडित का शास्त्रार्थ में पराजित कर, तत्कालीन राजा से आधा राज्य पारितोषक के स्वरूप में प्राप्त कर, आळवन्दार नाम भी प्राप्त किया। तत्पश्चात यमुनैत्तुरैवर, राज्य के परिपालन में व्यवस्त हो गए अतः कुछ इस प्रकार वह इस भौतिक जगत के भवसागर में व्यवस्त हो गए, वह अपने इस धरा पर अवतरण का कारण ही भूल गए। श्रीराममिश्र स्वामीजी यह सब देखकर अत्यंत दुःखित हुए और अपने आचार्य के वचन को याद कर, उन्हें (आळवन्दार) भगवद्भक्ति के सन्मार्ग का दर्शन करवाने की मन में ठान ली।

इसी सद्भावना से श्रीराममिश्र स्वामीजी जब आळवन्दार से मिलने गए तो मुख्यद्वारपालक ने उन्हे रोक दिया। श्रीराममिश्र स्वामीजी की सद्भावना आळवन्दार के प्रति और मजबूत हुई और इसी भावना से उन्होने छुपके से राजप्रासाद के प्रधान रसोइये से मित्रता कर कहा की हर रोज अपने राजा (आळवन्दार) को हरी सब्जी खिलाना और वह मैं हर रोज लेकर आऊंगा ताकि इससे तुम्हारे राजा का स्वास्थ्य सही बना रहे। इसके पश्चात आळवन्दार को हर रोज हरी सब्जी भोजन में मिलती रही, जिससे उनकी आसक्ति हरी सब्जी में और भी अधिक हो गयी। उनमें और उनके विचारों में धीरे धीरे परिवर्तन होने लगा।

तभी अचानक एक दिन हरी सब्जी भोजन में न मिलने पर आळवन्दार अपने रसोईयों से पूछते है ''आज हरी सब्जी क्यों नही बनायीं'' तो प्रमुख रसोइया कहता है, एक श्रीवैष्णव आया करते थे, उनके आग्रह पर हम उनकी हरी सब्जी आपको हर रोज परोसा करते थे, पर वह आज नही आये अतः हरी सब्जी आज भोजन में नहीं आयी। यह जानकर आळवान्दार अपने द्वारपालक को आज्ञा देते है की वह श्रीवैष्णव को उनके दरबार में आमंत्रित करें। इस प्रकार आमंत्रन पाकर अति प्रसन्न श्रीराममिश्र स्वामीजी आळवन्दार से मिलने राजदरबार में जाते है। वहाँ आळवन्दार श्रीराममिश्र स्वामीजी से पूछते है क्या उनको धन की जरूरत है तब श्रीराममिश्र स्वामीजी कहते है मेरे पास श्रीनाथमुनि के द्वारा प्रसादित अकूत धन है जो मैं तुम्हे (आळवन्दार) देना चाहता हूँ। यह सुनकर अति प्रसन्न आळवन्दार अपने अनुचरों को आज्ञा देते है की कभी भी श्रीराममिश्र स्वामीजी आए तो उन्हे तुरन्त अन्दर भेज दे। इस प्रकार आळवन्दार के विशेष अनुग्रह से श्रीराममिश्र स्वामीजी, उन्हे भगवद्गीता का सदुपदेश देते है जिसे सुनकर आळवंदार में परिवर्तन होने लगता है। श्रीराममिश्र स्वामीजी के अनुग्रह से प्राप्त विशेष ज्ञान से परिवर्तित आळवन्दार उनसे पूछते है - ''भगवद्गीता का सारांश जिससे भगवान का साक्षात्कार हो'' तब श्रीराममिश्र स्वामीजी उन्हें चरमश्लोक का गोपनीय रहस्य बतलाते है। इसके पश्चात श्रीराममिश्र स्वामीजी आळवन्दार को तिरुवरंगम ले जाते है और भगवान के दिव्य मंगल (अर्चामूर्ति) स्वरूप का दर्शन करवाते है। तिरुवरंगम भगवान श्रीरंगनाथजी के दिव्य स्वरूप को देखकर आळवन्दार भौतिक जगत से जुडी हुई डोरी को परिपूर्ण त्यागते है।

श्रीराममिश्र स्वामीजी अपने वैकुंठ गमन से पहले आळवन्दार को -

१) श्री नाथमुनि स्वामीजी के बारें में सदैव सोचने का उपदेश देते है।

२) उन्हें अपने बाद सम्प्रदाय का उत्तरदायित्व सौंपते है।

३) भविष्य में उनके जैसा एक परिवर्तकाचार्य को सम्प्रदाय के उत्तरदायित्व को सौंपने की घोषणा करने को कहते है।

अपने आचार्य मणक्काल्नंबि के आदेश और उनको दिए वचनानुसार आळवन्दार ने श्रीरामानुजाचार्य को भविष्य परिवर्ताकाचार्य के रूप में घोषित किये। अतः हमारे सत्सांप्रदाय के पथप्रवर्तक श्रीरामानुजाचार्य हुए।

तो इस प्रकार अपने आचार्य को दिया गया वचन पूर्ण कर मणक्काल्नंबि परमपदम को प्रस्थान हुए।

श्रीराममिश्र स्वामीजी का तनियन

कुम्भ मासे मघोद्भुतं राम मिश्र मुपास्महे।
पुंडरीकाक्ष पदाम्भोज समाश्रयण शालिनः।।
अयत्नतो यौमुनमात्मदासमलर्क पत्रार्प्पण निष्क्रयेण।
यः क्रीत्वानास्तित यौवराज्यम् नमामितं राममेयसत्वम्।।
अनुज्झित क्षमायोगं अपुण्य जन बाधकम।
अदृष्ट मद रागन्तं रामं तुर्य मुपास्महे।।

अन्नमाचार्य के वर्धंति
(दि. २१ मार्च २०२०) के संदर्भ में...

कट्टेदुर वैकुंठमु काणाचयिन कोंड!
तेट्टलाय महिमले तिरुमल कोंड!!
वेदमुले शिललै वेलसिनदि कोंड!
ये देस बुण्यरासुले येरुलैनदि कोंड!
गादिलि ब्रह्मादिलोकमुल कोनलकोंड!
श्री देवु डुंडेटि शेषाद्रि ई कोंड!!
सर्वदेवतलु मृगजातुलै चरिंचे कोंड!
निर्वहिंचि जलधुले निट्टचरुलैन कोंड!
वुर्वि दपसुले तरुवुलै निलिचिन कोंड!
पूर्वपु टंजनाद्रि ई पोडवाटि कोंड!!
वरमुलु कोटारुगा वक्काणिंचि पेंचे कोंड!
परगु लक्ष्मीकांतु सोबनपु गोंड!
कुरिसि संपदलेल्ल गुहल निंडिन कोंड!
विरिवैन दिदिवो श्री वेंकटपु कोंड!!

श्री अन्नमाचार्य भगवान बालाजी के अनन्य भक्त हैं। उक्त संकीर्तन में उन्होंने अपने आराध्यदेव के निवासस्थान तिरुमल पहाड की महिमा का भावगर्भित व सुलभ शैली में वर्णन किया। वे कहते हैं -

यह तिरुमल ही वैकुंठ है, अद्भुत महिमान्वित है। यहाँ पर वेद ही पत्थरों के रूप में विराजमान हैं। सारी पुण्य राशियाँ झरने के रूप में झर रहे हैं। ब्रह्मादि लोकों के लिए यह अत्यंत प्रिय है। श्री विष्णु (बालाजी) का निवासस्थान यही शेषाद्रि है। सभी देवतागण यहाँ जानवरों के रूप में विचरण करते हैं तथा तपस्वी वृक्षों के रूप में विराजित हैं। यह दीर्घकाय तिरुमल ही अंजनाद्रि है। यह तिरुमल ही वरदायिनी है। यह लक्ष्मी-कांति से शोभायमान है। ऐश्वर्य की राशियों से सभी गुफाएँ भरपूर हैं। यही वह महिमासंपन्न भगवान बालाजी का निवासस्थान है।

तिरुमालै आंडान
(मालाधर स्वामी)

- श्रीमती पूजा माधवदास अगर्वाल
मोबाइल - ९४२५४०८९२१

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. ८ मार्च २०२०

तिरुनक्षत्र - कुम्भ मास, मघा नक्षत्र

अवतार स्थल - तिरुमालिरुन्चोलै

आचार्य - श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी

शिष्य - श्रीरामानुजाचार्य (ग्रंथ कालक्षेप शिष्य)

श्री मालाधर स्वामीजी श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी के मुख्य शिष्यों में एक थे। वे मालाधर और श्रीज्ञानपूर्ण स्वामीजी के नाम से विख्यात थे।

श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी श्रीरामानुज स्वामीजी को हमारे सत्सम्प्रदाय के विभिन्न विषय-तत्त्वों को पढ़ाने के लिए अपने ५ प्रथम शिष्यों को निर्देश किये थे। उनमें से तिरुमालै आंडान को श्रीसहस्रगीति का अर्थशिक्षण की जिम्मेदारी दी थी। श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी के परमपद प्राप्ति और श्रीरामानुजाचार्य के श्रीरंगम प्रवास होने के बाद श्रीगोष्टीपूर्ण स्वामीजी ने श्रीरामानुजाचार्य को श्री मालाधर स्वामीजी से श्रीसहस्रगीति का गुप्तअर्थ एवं विशेषणों को समझने के लिये भेजे।

श्री मालाधर स्वामीजी ने जैसे श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी से श्रीसहस्रगीति के अर्थों को सुने वैसे ही श्रीरामानुज स्वामीजी को व्याख्यान करते रहे। लेकिन कई बार, श्रीरामानुज स्वामीजी ने कुछ श्लोकों (पाशुरों) का अपना दृष्टिकोण (श्री मालाधर स्वामीजी द्वारा बताया अर्थों से अलग अर्थ) से प्रस्तुत किये। उसे सुनकर श्री मालाधर स्वामीजी सोचते थे कि श्रीरामानुज स्वामीजी स्वविचार, जो आलवन्दार के व्याख्यानुरूप से भिन्न है, वो प्रस्तुत कर रहे थे। क्योंकि उन्होंने ऐसा निर्वचन आळवन्दार से कभी नहीं सुना था।

इस तरह एक बार, श्री मालाधर स्वामीजी ने श्रीसहस्रगीति "२. ३. ३-अरिया कालत्तुल्ले" पाशुर की व्याख्या ऐसे किया - "आळवार सन्ताप से कह रहे हैं कि भगवान श्रीमन्नारायण उनको निष्कलंक ज्ञान देने के बाद भी उसे इस शरीर के साथ इसी संसार में रखा है।" लेकिन श्रीरामानुजाचार्य इसे दूसरे तरीके से (दूसरी पंक्ति पहले रखकर) देखे थे। उन्होंने कहा कि वास्तव में यह पाशुर में आल्वार के हर्षोत्फुल एवं सुखमय भाव अभिप्रेत है अर्थात् आल्वार बहुत खुशी में भगवान से कहते हैं कि "अनाधिकाल से मैं इस संसार

में पीड़ित था। आपने मुझे इस अनायात से बचाया। क्योंकि इस दशक में आल्वार के पूर्ण आनंद का रहस्योद्घाटन करता है।'' यह सुनकर आंडान बहुत परेशान हुए और बोले थे कि ऐसे अर्थ को आळवन्दार से कभी नहीं सुना। जैसे विश्वामित्र मुनि ने त्रिशंगु महाराज के लिए एक नया लोक का निर्माण स्वयं किये थे, वैसे श्रीरामानुजाचार्य नए अर्थों का सृजन कर रहे थे। ऐसे बोलकर उन्होंने अपना व्याख्यान भी बंद कर दिया। यह सुनकर तिरुक्कोष्टियूर नंबि तुरंत तिरुक्कोष्टियूर से श्रीरंगम आये और आंडान से इस घटना के बारे में पूछे। आंडान बोले कि श्रीरामानुजाचार्य आळवन्दार से अनसुना अर्थों को बताते हैं। जब आंडान पूरी घटना बताये तब नंबि कहे कि वे स्वयं आळवन्दार से इसी अर्थ को सुना है और यह श्लोक (पाशुर) का एक मान्य स्पष्टीकरण है। उन्होंने आगे कहा कि ''जैसे भगवान श्रीमन्नारायण (श्रीकृष्ण) ने सांदीपनी मुनि से सीखा था, वैसे रामानुजाचार्य आप से तिरुवाय्मोलि सीख रहे हैं। आळवन्दार के विचार से भिन्न श्रीरामानुजाचार्य कुछ नहीं बोलेंगे। यह मत समझना कि श्रीरामानुजाचार्य को जो भी आप सिखाते हैं वो उसे पहली बार सुन रहे हैं।'' फिर वे आंडान और पेरियनंबि को श्रीरामानुजाचार्य के मत में लाकर श्रीरामानुजाचार्य को आंडान से श्रवण पुनः प्रारंभ करने की आवेदन किया।

इसके बाद, श्रीरामानुजाचार्य अलग ढंग से एक और श्लोक का अर्थ बताये। आंडान आश्चर्य से श्रीरामानुजाचार्य को पूछे कि बिना आळवंदार से मिले आप ऐसे अर्थविशेषों को कैसे समझते हैं? श्रीरामानुजाचार्य को पूछे कि बिना आळवन्दार से मिले आप ऐसे अर्थविशेषों को कैसे समझते हैं? श्रीरामानुजाचार्य बोले कि जैसे एकलव्य के द्रोणाचार्य थे वैसे मुझे आळवन्दार हैं। (एकलव्य सीधे द्रोणाचार्य से मिले बिना उनसे सब कुछ सीखा था।) आंडान श्रीरामानुजाचार्य की महानता को समझे और उनको अपना सम्मान पेश किया। उनको ये सोचके बहुत हर्ष हुआ कि जो भी अर्थविशेषणों को आळवन्दार से वो सुन नहीं पाये वो सब सुनने का एक और अवसर मिला। ऐसे कई पाशुर है जिनकी व्याख्या श्रवण में, आंडान और श्रीरामानुजाचार्य के विभिन्न दृश्यकोण (विचारों) को देख सकते हैं जो निम्नलिखित हैं :

तिरुवाइमोळि १.२ - नंपिल्लै व्याख्यान - ''वीडुमिन मुट्रवुम्''

परिचय अनुभाग - आळवन्दार से सुना आंडान, श्रीरामानुजाचार्य को इस दशक को प्रपत्ति योग का विवरण जैसे व्याख्यान किये। श्रीरामानुजाचार्य भी आरंब में वही दृष्टिकोण का पालन किये। लेकिन श्री भाष्य पूरी करने के बाद में उन्होंने इस दृष्टिकोण को बदलके इस दशक को भक्ति योग विवरण जैसे व्याख्यान करने लगे। श्रीरामानुजाचार्य प्रपत्ति को ''साध्य भक्ति'' नाम से पृथक किये, क्योंकि प्रपत्ति योग सबसे गोपनीय है और आसानी से गलत व्याख्यान किया जा सकता है (''मैं हूँ भक्ति कर्ता और भोक्ता'' ऐसे अहंभाव के बिना सिर्फ श्रीमन्नारायण के आनंद के लिए जो भक्ति होता है वही साध्य भक्ति है)। यह साध्य-भक्ति उपाय/साधन-भक्ति से अलग है (जो अक्सर भक्ति योग नाम से प्रख्यात है) श्री गोविन्द पेरुमाळ भी श्रीरामानुजाचार्य की ऐसे दृष्टिकोण का पालन किये।

तिरुवाइमोळि २.३.१ - नंपिल्लै व्याख्यानम् - ''तेनुम पालुम अमुदुमोत्ते कलन्दोळिन्दोम्''

इस पाशुर का व्याख्यान आंडान ने ऐसे किया था - ''आळ्वार बोलते हैं कि जैसे शहद और शहद

या दूध और दूध स्वाभाविक रूप से अपने आप में मिश्रण होता हैं वैसे ही श्रीमन्नारायण और मैं समैक्य हो गये।'' लेकिन श्रीरामानुजाचार्य उसका व्याख्यान ऐसे किये - आळवार कहते हैं कि हम (मैं और श्रीमन्नारायण) इस प्रकार मिले जिससे मधु, दूध और चीनी आदि मीठे सामग्री के मिश्रण से प्राप्त अमृतमय भोग्यवस्तु का पूर्ण अनुभव किये।

नाचियार् तिरुमोळि ११.६ व्याख्यान में पेरियवाच्चान् पिल्लै ने आंडान का आचार्य भक्ति को स्वयं दिखाते हैं- आंडान कहा करते थे कि ''यद्यपि हमें इस शरीर और उससे संबंधित सारे बंधनों को छोडना चाहिये परन्तु मुझे इस शरीर की उपेक्षा करना अमान्य है, क्योंकि मुझे इस शरीर से ही आळवन्दार का संबंध प्राप्त हुआ।'' नायनार् आचान् पिल्लै ने अपने चरमोपाय-निर्णय ग्रंथ में प्रदर्शन किये कि एक बार तिरुमालै आंडान ''पोलिग पोलिग'' श्लोक (पाशुर) (तिरुवाइमोळि ५.२) का व्याख्यान करते समय तिरुक्कोष्टियूर नम्बि गोष्टि में प्रकट किये कि इस श्लोक में वर्णित श्रीरामानुजाचार्य ही है। इसे सुनकर आंडान को परमानंद की प्राप्ति हुई और श्रीरामानुजाचार्य को तब से अपना आचार्य अळवन्दार मानकर यही घोषित किये।

आंडान का ध्यान श्लोक

रामानुज मुनीन्द्राय द्रामिडी सम्हितार्थदम्।
मालाधर गुरुम् वंदे वावधूकम् विपस्चितम्।।
माघे मघायां सम्भूतं द्राविडाम्नाय देशिकम।
तुरीयार्यम यतीन्द्रस्य मालाधार गुरूं भजे।।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

लेखक लेखिकाओं से निवेदन

सप्तगिरि पत्रिका में प्रकाशन के लिए लेख, कविता, रचनाओं को भेजनेवाले महोदय निम्नलिखित विषयों पर ध्यान दें।

१. लेख, कविता, रचना, अध्यात्म, दैव मंदिर, भक्ति साहित्य विषयों से संबंधित हों।

२. कागज के एक ही ओर लिखना होगा। अक्षरों को स्पष्ट व साफ लिखिए या टैप करके मूलप्रति डाक या ई-मेइल (hindisubeditor@gmail.com) से भेजें।

३. किसी विशिष्ट त्यौहार से संबंधित रचनायें प्रकाशन के लिए ३ महीने के पहले ही हमारे कार्यालय में पहुँचा दें।

४. रचना के साथ लेखक धृवीकरण पत्र भी भेजना जरूरी है। 'यह रचना मौलिक है तथा किसी अन्य पत्रिका में मुद्रित नहीं है।'

५. रचनाओं को मुद्रित करने का अंतिम निर्णय प्रधान संपादक कार्य होगा। इसके बारे में कोई उत्तर प्रत्युत्तर नहीं किया जा सकता है।

६. मुद्रित रचना के लिए परिश्रमिक (Remuneration) भेजा जाता है। इसके लिए लेखक-लेखिकाएँ अपना बैंक प्रथम पृष्ठ जिराक्स (Bank name, Account number, IFSC Code) रचना के साथ जोड करके भेजना अनिवार्य है।

७. धारावाहिक लेखों (Serial article) का भी प्रकाशन किया जाता है। अपनी रचनाओं का भेजनेवाला पता-

प्रधान संपादक,
सप्तगिरि कार्यालय,
ति.ति.दे.प्रेस कांपौन्ड, के.टी.रोड,
तिरुपति – ५१७ ५०७. चित्तूर जिला।

होली उत्सव (०९.०३.२०२०) के अवसर पर...

हमारी भारतीय संस्कृति में बहुत सारे त्यौहार, बहुत सारे उत्सव हमारी संस्कृति को उजागर करते है। त्यौहार और उत्सव से संस्कृति का असल परिचय मिलता है। हर एक त्यौहार के साथ हमारी संस्कृति और संस्कार जुडा हुआ है। सालभर के कई सारे धार्मिक त्यौहार हमारे शास्त्रों की देन है। सारे धार्मिक त्यौहार के साथ हमारा धर्म, हमारी संस्कृति और हमारा संस्कार भी जुडा हुआ है। ऐसा ही एक त्यौहार हमारी जिंदगी और संस्कृति का हिस्सा है, वो है 'होली उत्सव' फाग उत्सव के नाम से भी प्रचलित है।

- श्रीमती प्रीति ज्योतीन्द्र अजवालिया
मोबाइल - ९८२५११३६३६

फाल्गुण शुक्ल पूर्णिमा के दिन फाग उत्सव याने के होली उत्सव पूरे देश में मनाया जाता है, खास कर के राजस्थान संस्कृति में होली उत्सव का बहुत बडा महत्व है। राजस्थान में ये उत्सव आठ दिन तक चलता है। मारवाडी लोग ये फाग उत्सव बडी धूम धाम से बहुत उत्साह से खेलते है। एक दूसरे को रंगों से भर देते है और कई दिन तक रंगभरे कपडों में ही घूमते फिरते है।

विशेष रूप से उत्तर भारत के व्रज मंडल में, गोकुल, मथुरा, वृंदावन सब जगह ये फाग उत्सव बडी धूम धाम से मनाने की प्रणाली युगों से, सालों से चली आयी है।

होली को हम ''रंगोत्सव'' के नाम से भी जानते है।

इस त्यौहार में मानव मुक्त मन से विहार करते है। सभ्यता का अति कठिन बंधनों को हटाकर हम इस रंगोत्सव बडी धूम धाम, आनंद और उत्साह से मनाते है।

'होली' की पौराणिक कथा

यह एक ऐतिहासिक घटना प्रसंग है। हिरण्यकश्यप असुर बहुत घमंडी असुर था। सब जगह पृथ्वी पर चारों ओर अपना ही महत्व फैला के घूमता फिरता था। वो समझता था की हम पूरी सृष्टि का राजा है। सब लोग मेरी ही पूजा आराधना करे और मेरा ही नाम ले, मैं ही इस सृष्टि का भगवान हूँ, ऐसी गंदी और घमंडी सोच के साथ शासन कर रहा था।

इस हिरण्यकश्यप असुर के घर में एक पवित्र बालक ने जन्म लिया। उसका नाम प्रह्लाद रखा गया। प्रह्लाद भगवान नारायण का ही अंश था। ये पवित्र बालक जन्म से ही नारायण का मंत्र जाप करता था। पुत्र प्रह्लाद की धर्म प्रति आस्था देखकर पिता हिरण्यकश्यप बहुत गुस्से हुआ, वो अपना साम्राज्य अखंड रखने के लिये कटिबद्ध था। पिता अपने पुत्र प्रह्लाद को नारायण नाम से दूर करने की चेष्टा करता रहा। अनेकानेक प्रयत्न किया फिर भी पुत्र प्रह्लाद को नारायण से दूर करने में असमर्थ रहा। अंत में पुत्र प्रह्लाद को मृत्यदंड देने के लिये तैयार हो गया, तब उसने सोचा की प्रह्लाद को अग्नि में जलाकर उसका अंत कर दिया जाय।

असुर हिरण्यकश्यप की बहन होलिका को ब्रह्माजी का पवित्र वरदान था कि, ''अग्नि कभी होलिका को स्पर्श नही कर सकती।'' इस का दुरुपयोग करने की सोच असुर को आयी। उसने होली का को आज्ञा दी की ''तुम ये बालक प्रह्लाद को अपने गोद में बिठाकर अग्नि में बैठ जा और बालक प्रह्लाद को मृत्युदंड दिया जाय।''

बहन होलिका सद्वृत्तिवाली थी, प्रह्लाद को बहुत प्यार करती थी। वो अपने वरदान से प्रह्लाद को बचा लेना चाहती थी। भाई की आज्ञा के अनुसार प्रह्लाद को अपने आंचल में बिठाकर बडी चिता पर जा बैठी। पुत्र प्रह्लाद संपूर्ण निर्भय था।

वो आँख बंध करके भगवान नारायण के अष्टाक्षर मंत्र का जाप कर रहे थे। इस कठिन परिस्थिती में भी प्रह्लाद ने अपने इष्ट भगवान को नही भूला, प्रभु नाम स्मरण के कारण प्रभु ने प्रह्लाद को अग्नि से बचा लिया और होलिका के साथ प्रह्लाद था इसलिये उसका वरदान फोक बन गया और होलिका अग्नि में भस्म हो गई।

इस का तात्पर्य ये हुआ की कोई भी प्राणी, मनुष्य और जीव सतत प्रभु को अपने पास रखते है, अपने मन में रखते है, अपने दिल में रखते है, प्रभु सदा उसकी रक्षा करता है, और उसका अहित कभी नही होता।

होली के अवसर पर होलिका और अग्नि देव का पूजन

होली के अवसर पर पूर्णिमा की शाम को घर के बाहर, महोल्ले और शेरी के बाहर अग्नि प्रज्वलित करते है। इस वक्त सभी मानवलोग अग्निदेव और होली का विशेष पूजन करते है। सत्यनिष्ठ, प्रभुनिष्ठ, सद्वृत्तिवाले प्रह्लाद को अग्निदेव ने अग्नि से बचा लिया और सद्वृत्तिवाली होलिका ने अपनी जिंदगी दाव पे लगा दी और प्रह्लाद को बचा लिया। इस का मान-सम्मान रख के, हम सब लोग अग्निदेव और होलिका को कुमकुम, अक्षत, खजूर से पूजा करते है।

अबीर, गुलाल का छँटकाव भी करते है। होलिका की आत्मशांति के लिये अग्नि की चारों ओर जलधारा करते है।

विशेष में खजूर, दाल का प्रसाद करते है।

होली उत्सव अर्थात् वसंत का आगमन...

ये सृष्टि में हम सब मानव लोग प्रकृति और वसंत का हर्षभेर आगमन करते है। इस समय में पूरी सृष्टि में वसंत का वैभव अगाध होता है। बहुत मनोहर होता है, प्रकृति चारों ओर खाली हुई नजर आती है, मानो के हमारी पृथ्वी ने हरियाली चादर ओढ ली है।

होली उत्सव में सदाशिव का उत्तम संदेश

सदाशिव हम मानव को ये सीख दे रहे है की इस मस्तीभरी वसंत के वैभव में हमे संयम को नही भूलना है। इस हकीकत पौराणिक घटना के साथ जुडी हुई है।

वसंत के वैभव में कामांध कामदेवजी ने सदाशिव शंभु के ऊपर हमला किया, इस वक्त सदाशिव ने कामदेव की कामवासना को जला दिया और कामदेव की कामांध प्रवृत्ति का मूल से नाश किया। इस घटना से सदाशिव हम मानव का यह संदेश दे रहा है की इस वसंत के वैभव में संयम को बनाये रखे, हमारे मन को प्रफुल्लित करके मुक्त मन से होली का उत्सव मनाये।

होली उत्सव के साथ-साथ अनेकविध उत्सव

(१) वसंत के वैभव में कामांध कामदेव संयम को भूल गया और शिवजी के प्रति अपना जादु फैलाने की कोशिश की, तब शिवजी ने उसकी कामांध प्रवृत्ति का नाश किया, और कामवासना का दहन किया, वही उत्सव का दिन फाल्गुण शुक्ल पूर्णिमा थी।

(२) व्रजभूमि में ये उत्सव फाग उत्सव के नाम से प्रचलित है। खास करके वैष्णवजन होलिका दहन की जगह पूतना दहन करते है, व्रज के सारे बालक लोग पूतना का पूतला बना के जलाते है और पूर्णिमा के दिन आनंद और उत्साह से रंगों से खेलते हैं।

(३) भागवत पुराण में कहा है कि, भगवान श्रीकृष्ण को आत्मन्यूनता परेशान करती थी। वो बहुत सोचते थे की राधा बहुत सुंदर और गौर वर्णवाली है, मैं तो श्यामवर्ण हूँ, हमारे दोनों के बीच बहुत काफी अंतर है। श्याम ने, माता यशोदा से कहाँ की, मैया, राधा बहुत गोरी है, मैं श्याम हूँ, तो राधा मुझे चाहेगी, प्रेम करेगी? तब यशोदा ने कहा की कन्हैया तु राधा का मुह अबीर गुलाल से रगडकर श्याम बना दे। तब श्रीकृष्ण ने यशोदा की बात पर राधा के चेहरे पर अबीर गुलाल रगड लिया, तब से व्रजभूमि में यह पवित्र उत्सव की प्रथम शुरुआत हुई। यही दिन लोग रंगोत्सव मनाते है।

राधा और श्याम के बीच रंगोत्सव में जो संवाद हुआ उसका सुंदर पद अनंतप्रसादजी ने लिखा है -

होरी खेले सहु ब्रीजनारी, स्हामा सोहे कुंजबीहारी।
सुंदर बीदावन यमुना की ऋतु वसंत सुखकारी।।
सुंदर सखी, सुंदर सामग्री, सुंदर श्याम मुरारी।
श्यामे सद्य सखी जीतना स्वरूप लिया कामारी।।
कोइ दीसे मुख श्वेत अबीर से, कोइ कस्तूरी धारी।
गुलाले लाल बनी सब सखी, कंपे कइक बिचारी।।
रंग से तरबोर थनारी, होरी खेले सहु ब्रीजनारी।
सोचे सहु सखी, श्याम खेले मुझ से ही भारी।।
होरी खेले सहु ब्रीजनारी।।

(४) फाल्गुण शुक्ल पूर्णिमा के दिन श्रीवैकुंठाधिपति श्रीहरि विष्णुपत्नी श्री लक्ष्मीजी का प्रादुर्भाव हुआ था। स्वर्गाधिपति इन्द्र की पत्नी शची देवी के नाम से उत्सव प्रचलित थे। होली का पवित्र दिन शची देवी के जन्मदिन के रूप में मनाते है।

होली उत्सव का शुभ संदेश

होली के इस पवित्र अवसर पर फाल्गुण के विविध रंगों से हमारा जीवन रंगीन बनाये, वसंत के वैभव में संयम के साथ प्रकृति का आनंद ले और सत्यनिष्ठ, प्रभुनिष्ठ, सद्‌वृत्ति की रक्षा करके असद्‌वृत्ति, इर्ष्या को होली अग्नि में जलाकर भस्म कर दे यही शुभसंदेश के साथ सभी वाचक वृंद को होली की शुभकामनायें।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

तरिगोंडा
श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव
०२-०३-२०२० से १०-०३-२०२० तक

०२-०३-२०२० सोमवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - हंसवाहन

०३-०३-२०२० मंगलवार
दिन - मोतीवितानवाहन
रात - हनुमद्वाहन

०४-०३-२०२० बुधवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - सिंहवाहन

०५-०३-२०२० गुरुवार
दिन - तिरुच्चि उत्सव
रात - महाशेषवाहन

०६-०३-२०२० शुक्रवार
दिन - तिरुच्चि उत्सव
रात - गजवाहन

०७-०३-२०२० शनिवार
दिन - तिरुच्चि उत्सव
सायं - सर्वभूपालवाहन
रात - कल्याणोत्सव,
गरुडवाहन

०८-०३-२०२० रविवार
दिन - रथ-यात्रा
सायं - धूळि उत्सव

०९-०३-२०२० सोमवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन,
अश्ववाहन

१०-०३-२०२० मंगलवार
दिन - वसंतोत्सव, चक्रस्नान
रात - ध्वजावरोहण

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

तिरुमल में रथसप्तमी (०१-०२-२०२०) के दिन संपन्न श्री मलयप्पस्वामीजी के सप्तवाहन सेवाओं के दृश्य।

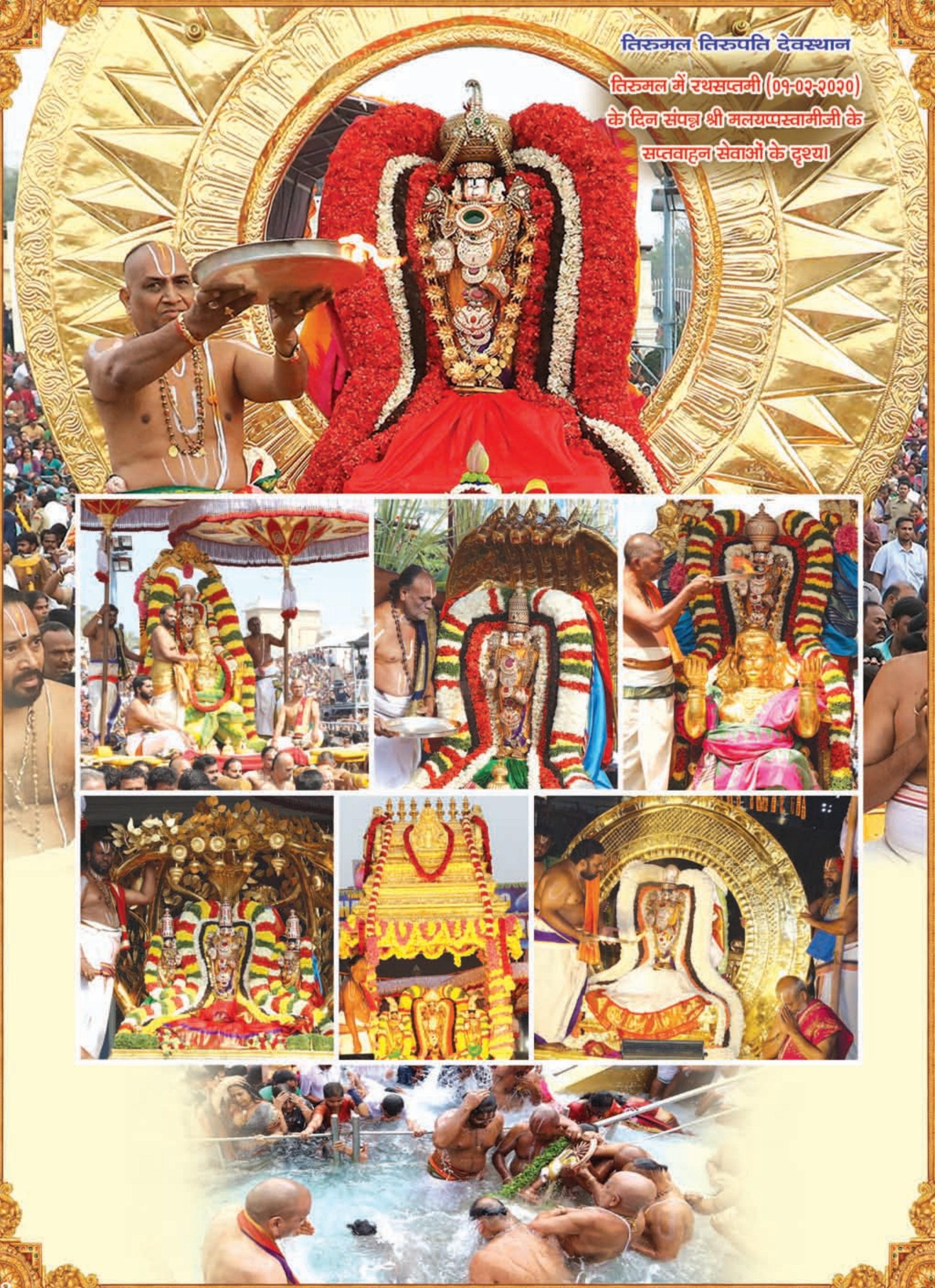

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

तिरुचानूर में रथसप्तमी (०१-०२-२०२०) के दिन संपन्न श्री पद्मावती देवी माँ के सप्तवाहन सेवाओं के दृश्य।

दि. ०४-०२-२०२० को तिरुपति स्थित श्रीवेंकटेश्वर वेटर्नरी विश्वविद्यालय के स्नातकोत्सव में मुख्य अतिथि के रूप में भागलेने के लिए पधारे हुए आंध्रप्रदेश के राज्यपाल माननीय श्री बिश्वभूषण हरिचंदन् जी का ति.ति.दे. श्री पद्मावती अतिथि गृह में स्वागत करते हुए ति.ति.दे. संयुक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी.वसंत कुमार, आई.ए.एस., मुख्य सुरक्षा व चौकसी अधिकारी श्री गोपिनाथ जेट्टी, आई.पी.एस., और तुडा अध्यक्ष व ति.ति.दे. पदेन सदस्य श्री चेविरेड्डी भास्कररेड्डी जी ने भाग लिया।

तिरुपति श्री गोविंदराजस्वामीजी का वार्षिक प्लवोत्सव २०२०, फरवरी २ से ८ तक संपन्न हुआ। इन उत्सवों के अंतर्गत श्री कोदंडरामस्वामी, श्री पार्थसारथी स्वामी, श्री कल्याणवेंकटेश्वर स्वामी, श्रीकृष्ण स्वामी, श्री आंडाल देवी माँ और श्री गोविंदराज स्वामीजी ने नौका पर विहार करते हुए भक्तों को दर्शन दिया था।

दि. २६-०१-२०२० को ७१वाँ गणतंत्र दिवस के अवसर पर ति.ति.दे. प्रशासनिक भवन के क्रीडा मैदान में राष्ट्रीय झंडा को फेहरा कर, कवायद वंदन को स्वीकारते हुए ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री अनिल कुमार सिंघाल, आई.ए.एस., । इस कार्यक्रम में ति.ति.दे. अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री ए.वी.धर्मारेड्डी, ति.ति.दे. संयुक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी.वसंत कुमार, आई.ए.एस., मुख्य सुरक्षा व चौकसी अधिकारी श्री गोपिनाथ जेट्टी, आई.पी.एस., और अन्य उच्चपदाधिकारी, ति.ति.दे. कर्मचारियों ने भाग लिया।

श्रीमहालक्ष्मी! कोल्हापुरनायकी!!

श्रीलक्ष्मीजयंती (१०.०३.२०२०) के अवसर पर...

तेलुगुमूल - श्री एम.रामकृष्णमाचार्युलु

हिन्दी अनुवाद - डॉ.जी.सुजाता

मोबाइल - ८१८५८७११३०

'श्री' यानी धन संपत्ती देनेवाली ''श्रीमहालक्ष्मी' है। 'श्री' यानी स्वयं लक्ष्मीजी का घर में निवासित होना है। इसलिए तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी 'श्री-निवास' नाम से जाने जाते हैं। समस्त चराचर विश्व श्रीमहालक्ष्मीजी का स्वरूप ही है, ऐसा कई जगहों पर, कई प्रकार से लक्ष्मीदेवीजी ख्याति प्राप्त की हैं। ऐसे कई संदर्भ देखने को मिलते हैं कि जब भी भगवान श्री महाविष्णुजी का अवतरण हुआ है उनके देवेरी के रूप में तथा पट्टमहिषि के रूप में श्रीमहालक्ष्मीजी भी अवतरित हुई हैं।

भृगुमहर्षि से परीक्षित होने के कारण श्रीमहालक्ष्मीजी वैकुंठ को छोडकर, भूलोक में स्थित कोल्हापुर क्षेत्र पहुँची। इस क्षेत्र में 'कोल्हासुर', तथा 'करवीर' नामक राक्षसों का वध करके, कोल्हापुरवासिनी, करवीरपुरवासिनी के रूप में नामांकित हुई हैं। इस क्षेत्र में साक्षात् श्रीमहालक्ष्मी के रूप में पूजाये स्वीकारते हैं। उसके बाद श्रीवैकुंठ से महालक्ष्मी की तलाश में भूलोक पर आये श्रीमहाविष्णु, 'श्रीवेंकटेश्वर' के रूप में वेंकटाचलक्षेत्र में बस गए। ये कोल्हापुर में श्रीमहालक्ष्मीजी का अनुग्रह पाने के लिए दस वर्ष तपस्या की। लेकिन वहाँ पर लक्ष्मीजी प्रकट नहीं हुई। तब अशरीरवाणी के कहने पर, श्रीवेंकटेश्वरजी ने स्वर्णमुखी नदी के किनारे, पद्मसरोवर के पास, बारह वर्ष तक तपस्या की। उस तपस्या के कारण श्रीमहालक्ष्मी, पद्मसरोवर में, सहस्त्र दलोंवाली सोने के पद्म में अलमेलुमंगम्मा तथा पद्मावती के नामों से अवतरित होकर, श्रीवेंकटेश्वरजी के पास पहुँचकर, श्रीस्वामीजी को सुसंपन्न बना दिया।

स्थल पुराण - श्रीमहालक्ष्मी नाराज होकर, अधोलोक पहुँचकर, वहाँ पर तपस्या करते हुए समय बिता रही थी। तब अगस्त्यादि महार्षियों ने वहाँ पहुँचकर, तपस्या कर रही श्रीमहालक्ष्मीजी का दर्शन करके, उनसे प्रार्थना किया कि माता - पद्मावतपुर, यक्षालय, शिवालय, दक्षिण काशी (दक्ष यज्ञ के समय सतीदेवी के नेत्र जहाँ पर गिरे, वह दिव्यक्षेत्र) करवीरपुरम् जैसे कई नामों से ख्याति प्राप्त ''करवीरपुर'' नामक इस क्षेत्र में अर्चामूर्ति के रूप में अवतरित होकर, भक्तजनों को अपना आशीर्वाद प्रदान करो। महर्षियों की प्रार्थना से प्रसन्न होकर श्रीमहालक्ष्मीजी की 'करवीरपुर' में अर्चारूप में केवल कुछ कलांशों से अवतरित होकर, भक्तजनों को अनुगृहीत कर रही है।

कोल्हापुर, करवीरपुर नाम कैसे आये?

प्राचीन काल में भगवान ब्रह्मदेव ने गयासुर, लवणासुर तथा कोल्हासुर इन तीनों को अपने मानसपुत्रों के रूप में जन्म दिया। उनका जन्म राक्षस अंश में होने के कारण, ब्रह्मदेव ने उनके राक्षसीय प्रवृत्ति का सहन न करके, गयासुर तथा लवणासुर का वध किया। अब केवल कोल्हासुर ही शेष रह गया।

अपने भाइयों का वध करने के कारण, कोल्हासुर ने भगवान विष्णु तथा अन्य देवतावों पर बदले की भावना। उसने सोचा कि इन सब को अपनी तपशक्ति से जीत सकेगा। अपना प्रशासित राज्य पद्मावतपुर को, अपने पुत्रों को सौंपकर तपस करने के लिए चला गया। तब उसके शतृराजा 'सुकेशी' राज्य पर आक्रमण करके, कोल्हासुर के पुत्रों का वध करके, राज्य पर कब्जा कर लिया। इस प्रकार 'सुकेशी' देवतावों को अलग-अलग तरीकों से सताते हुए उत्पीडित करने लगा। तब देवतावों को लगा कि इससे बेहतर वह कोल्हासुर ही है। और कोल्हासुर के आगमन के लिए इंतजार करने लगे।

इस बीच ब्रह्मदेव से सारे वरदान प्राप्त करके अपने राज्य में वापस आया। लेकिन सुकेशी के हाथों अपने पुत्रों की मौत की खबर सुनकर, क्रोधित होकर सुकेशी को तथा उनके पुत्रों और सभी रिश्तेदारों का वध करके, फिर से अपने राज्य को प्राप्त किया। लेकिन देवतावों पर उसके बदले की भावना कम नही हुई। उनपर कई बार आक्रमण करके भी, उनको कुछ नहीं कर सका। वह सोचने लगा कि इसका क्या कारण हो सकता है?

तब कोल्हासुर को पता चला कि साक्षात् श्रीमहालक्ष्मी वैकुंठ से उतरकर, अपने राजधानी पद्मावतिपुरम् (कोल्हापुरम्) में ही बसी हुई है, उस माता की कृपा के कारण ही सभी देवताओं की रक्षा हो रही है। इसीलिए उन्हे जीतने में वह असमर्थ है। देवताओं पर से श्रीमहालक्ष्मी की कृपा हटाने के लिए केवल तपस्या करना ही उचित मार्ग है, यह बात समझते ही वह राज्य को अपने पुत्र 'करवीरा' को सौंपकर फिर तपस्या करने चला गया। श्रीमहालक्ष्मी के लिए घोर तपस्या की। तब माता प्रत्यक्ष होकर वर माँगने को कहा तो कोल्हासुर ने बोला, माता! जगज्ननी! सौ साल के लिए पद्मावतीपुर छोडकर तुम कहीं भी चले जाओं। मेरे राज्य में मत रहना। तब महालक्ष्मी उस राज्य को छोडकर चली गयीं। उसके बाद उम्र ढलने के कारण, अपने राज्य को 'करिवीर' नामक पुत्र को सौंपकर कोल्हासुर फिर तपस्या करने के लिए चला गया।

पिता की अपेक्षा पुत्र ने नितान्त कठिन रूप से देवताओं पर आक्रमण करके उनको सताने लगा। तब भगवान शिव ने उसका वध किया। इस प्रकार मरते समय भगवान शिव से प्रार्थना की कि - यह पद्मावतीपुर उसके नाम से जाना जाय। शिव ने ऐसा ही अनुगृहीत किया। तब से उसे 'करवीरपुरम्' नाम से बुलाने लगे।

यह बात जानकर कोल्हासुर, अपना धर्ममार्ग छोडकर, अधर्ममार्ग में देवताओं को सताने लगा। तब श्रीमहालक्ष्मी ने देवताओं से कहा कि - सौ साल तक उसे कोई कुछ नही कर सकेगा। तब तक के लिए सहनशील रहे। उस प्रकार काल क्रम में सौ साल बीत जाते ही श्रीमहालक्ष्मी ने कोल्हासुर का वध किया। तब मरते समय लक्ष्मीदेवी से प्रार्थना की - माता? लक्ष्मीदेवी, यह क्षेत्र मेरे नाम से विख्यात हों, और तुम भी यहीं पर विराजित होकर, भक्तजनों की इच्छावों को पूरा करके, उनका संरक्षण करो। तभी से कोल्हापुरम्, कोल्हापुर साधनक्षेत्र के रूप में तथा सिद्धि क्षेत्र के रूप में ख्याति प्राप्त की। इस प्रकार श्रीमहालक्ष्मी वहाँ पर विराजित हुई है।

श्रीमहालक्ष्मी

गर्भगृह में लगभग छहफुट के चौकोर आकर के ऊँचे मंडप पर, दो फुट का जो पीठ बना हुआ है, उस पीठ पर महालक्ष्मी, चार भुजाओं की मुद्रा में बैठी हुई दिखाई देती है। चारों हाथों में फल, गदा, ढाल, पानपात्र आदि हैं।

मूलमूर्ति तीन फुट की ऊँचाई पर, विविध प्रकार के आभरणों से सुसज्जित होकर, सुन्दर और मनमोहक रूप में विराजित हुई है। माताजी के मूलमूर्ति के पीछे, सिंहवाहन है। मूलमूर्ति पश्चिम दिशा की ओर स्थित है। साल में दो-तीन बार, तीन दिनों के लिए, पश्चिम दिशा में उपस्थित छोटी सी खिडकी के द्वारा, सूर्यास्त के समय, सूर्य-किरण माताजी के मुह को स्पर्श करते हैं। इसे देखने के लिए अधिक संख्या में भक्तजन आते हैं। गर्भगृह की दीवार पर श्रीचक्र का होना, यहाँ की और एक विशिष्टता है। पहले केवल महालक्ष्मीजी की ही प्रतिष्ठापन की गयी है। बाद में ११वाँ शताब्दी में गंडिरादित्य के समय में प्रदक्षिणा का मार्ग, देवी महाकाली, महासरस्वती की प्रतिष्ठा हुई हैं। मूलविराट और महाकाली के नीचे महालक्ष्मी यन्त्र की स्थापना की गयी है।

मन्दिर का निर्माण शैली

श्रीमहालक्ष्मीजी के विशिष्ट मन्दिरों में, कोल्हापुर मन्दिर अत्यन्त प्रसिद्ध है। यह मन्दिर महाराष्ट्र के कोल्हापुर में पंचगंगानदी के किनारे पर स्थित है। यह मन्दिर लगभग छे हजार वर्ष पुराना है। कई राजाओं ने इस मन्दिर का निर्माण किया। यह विशाल परिसर में, हेमाड्पन्त शैली में, शिल्पकला कौशल से निर्मित की गयी है। चारों दिशाओं में मुखद्वारों का निर्माण हुआ है। पाँच गोपुरों के नीचे मन्दिर है। चारों दिशाओं में चार गोपुर, बीच में एक गोपुरम् हैं। उनमें पूरब दिशा की गोपुर के नीचे श्रीमहालक्ष्मी उपस्थित हुई है। बीच में कुमार मण्टप, पश्चिम दिशा में गणपति, उत्तर दिशा में महाकाली, दक्षिण दिशा में महासरस्वती स्थित हैं। इस मन्दिर के उपालयों में वेंकटेश्वरस्वामी, नवग्रह, राधाकृष्ण, कालभैरव, गणपति, सिंहवाहिनी, तुल्जाभवानी आदि अनेक देवताएँ भी हैं।

पूजा कार्यक्रम तथा उत्सव

यहाँ हर दिन पाँच बार माता महालक्ष्मीजी की अर्चना होती है। सुबह पाँच बजे सुप्रभात सेवा करके, काकड हारती देते हैं। सुबह आठ बजे षोडशोपचार पूजा करते हैं। दोपहर तथा शाम को पूजा के साथ सेज हारती देते हैं। हर शुक्रवार को विशेष पूजा किया जाता है। चैत्रमास में आनेवाले पूर्णिमा के साथ, नवरात्रियों में माताजी के उत्सव मनाते हैं। हर शुक्रवार के दिन शाम को, तथा पूर्णिमा के दिन मन्दिर के बाहर देवी जुलूस निकाली जाती है।

हैदराबाद से ५४० कि.मी. की दूरी पर स्थित कोल्हापुर जाने के लिए बस तथा रेल की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। इतनी विशिष्टता तथा उत्कृष्टता से भरी कोल्हापुर श्रीमहालक्ष्मी का दर्शन करके, हम माता की कृपा का पात्र बनेंगे। वहीं देवी माँ, तिरुचानूर में श्री पद्मावती देवी के रूप में उद्भव होने के कारण, यहाँ की देवी माँ को भी दर्शन करके, हम सब पुनीत होंगे।

महालक्ष्मी का उद्भव नौ रूपों में हुई हैं। महिषासुरमर्दिनि, योगीन्द्र(महाकाली), कौशिकि (महाविद्या), सुनंदा(विंध्यावासिनी), रक्तदन्तिका, शाकम्बरी (धान्यलक्ष्मी), दुर्गा, भीमा, भ्रामरी आदि।

श्रीमहालक्ष्मी श्रीनिवास

उसी प्रकार, श्रीमहालक्ष्मी मात्र श्रीनिवास के हृदय पर ही नही, बल्कि पूरे शरीर पर अधिकृत हुई है। वे, शरीर में 'भाग्यलक्ष्मी' के रूप में; दोनों हाथों में 'दानलक्ष्मी'; दोनों भुजावों में 'वीरलक्ष्मी' बनकर; हृदय कमल में 'भूतकारुण्यलक्ष्मी' के रूप में; नंदक-खड्गाग्र में 'शौर्यलक्ष्मी' बनकर; गुणगणों में 'कीर्तिलक्ष्मी'; शांतिस्वरूप में 'सौम्यलक्ष्मी'; सर्वांगों में 'सर्वसाम्राज्यलक्ष्मी' के रूप में; श्रीनिवास के पूरे शरीर में... पाँव से लेकर हृदय तक 'अष्टलक्ष्मी' के रूप में घटकर, रहने के कारण ही, स्वामीजी का 'श्रीमहालक्ष्मीश्रीनिवास' के रूप में सार्थक हुई है।

कालदैव 'उगादि'

तेलुगु मूल - डॉ.के.रामकृष्ण

हिन्दी अनुवाद - डॉ.बी.के.माधवी
मोबाइल - ६२८१८१४२०८

उगादि (२५.०३.२०२०) के अवसर पर...

पृथ्वी पर वसंत विकसित पहली दिन 'उगादि' है। अन्य त्योहारों से उगादि पर्व की ज्यादा विशेषता है। साधारण रूप से सारे पर्व कोई एक देवता से संबंधित होती है। लेकिन उगादि पर्व इससे भिन्न है। किसी भी देवता का नाम इस त्योहार के दिन सुनाई नहीं देगा।

उगादि 'काल' का संकेत है। मानव जीवन और काल का अनुबंध को याद करनेवाले आनंद समय ही उगादि है। काल की गणाना करते हुए बदलते हुए काल के अनुरूप जीवन को मोडने का संदेश उगादि पर्व के द्वारा मिलता है। सहन के लिए, व्यक्तित्व विकास के लिए, मनोविकास के लिए आलवाल रहता है।

काल अनंत है। कब इसका जन्म हुआ, कैसे बदलती है इसके बारे में कोई भी नहीं जान सकते हैं। वह एक स्वयंभू मूर्ति है। ग्रहगतों के आधार पर खगोल में होनेवाले बदलाव को जानकर हम काल का विभाजन कर रहे हैं। काल के लिए ''यही निर्दिष्ट विभाजन'' के रूप में कुछभी नहीं है।

काल विभाजन

हम उपयोग कर रहे काल विभाजन में अत्यंत सूक्ष्म विभाग का नाम है, ''निमेषं'', इसे ही मामूली भाषा में ''निमिषं'' (पल) कह रहे है। निमेष का अर्थ है 'पलक लगने का वक्त।' ऋग्वेद में निमेषं पद का अर्थ काल के संकेत के रूप में न होकर ''पलग नहीं मूँदनेवाले''(देवताएँ) के रूप में उपयोग किया हैं। उपनिषदों के काल में आते ही काल को स्पष्ट रूप में विभाजन किये गये उदाहरण हमें मिलते हैं। ''*कला मुहूर्ताः काष्ठाश्च अहोरात्राश्च सर्वशः। अर्धमासा मासा रुतुवस्सवंत्सरश्च कल्पंतां।*'' ऐसे 'मांड्यूक्योपनिषत्त' काल विभजन के बारे में व्यक्त करती है।

ऋतु, कार्त्ते, मासों का विभाजन

प्रस्तुत वसंत, ग्रीष्म, वर्ष, शरत, हेमंत, शिशिर ऋतुएँ आचार में हैं। एक-एक ऋतु दो महीने रहती हैं। इसके अनुसार साल में रहे १२ महीनों में छः ऋतुएँ आती हैं। वास्तव में भारतीय वेदवाङ्मय में अत्यंत प्राचीन ऋग्देव में वसंत, ग्रीष्म, शरत् जैसे तीन ऋतुओं का प्रस्ताव ही है। वर्षा को प्रत्येक ऋतु के रूप में न होकर प्रत्येक काल के रूप में परिगणित (ऋग्देव के सातवें मंडल में) है। कृष्णयजुर्वेद में पाँच ऋतुओं की प्रस्तावना है। छः ऋतुओं की प्रस्तावना है। लेकिन

प्रस्तुत हम उपयोग कर रहे चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ... जैसे १२ नामों के अलावा मधु, माधव, शुक्र, शुचि, नभ, नभस्य, इष, ऊर्जा, सह, सहस्य, तप, पपस्थ जैसे नामों का यहाँ उपयोग किया है।

अब हम उपयोग कर रहे चैत्र, वैशाख जैसे महीनों के नाम चंद्रग्रह संचार के आधार पर बनाया गया है। नक्षत्रों के आधार पर चंद्र के गमन का परिशीलन करने पर चंद्र एक नक्षत्र कूटमि से शुरू होकर फिर उसी नक्षत्र कूटमि तक जाकर मिलने के लिए करीब २७ दिन लगता है। इसी को नक्षत्रमास कहते हैं। इन २७ दिनों में चाँद पार करने वाले एक-एक नक्षत्र के आधार पर अश्विनि, भरणि, कृत्तिका आदि २७ नक्षत्रों के नाम बना है। इसके बाद हर महीने में पूर्णिमा के दिन चाँद जिस नक्षत्र में रहता है उस नक्षत्र के नाम पर उस महीने का नाम बनाया गया है। इसके अनुसार चाँद पूर्णिमा के दिन चित्ता नक्षत्र में रहता है तो चैत्र मास होता है। इसी प्रकार विशाख नक्षत्र में आनेवाले पूर्णिमा महीने को वैशाखमास इस प्रकार सब महीनों का नाम बना है।

चंद्रगमन के जैसे सूर्य से संबंधित साल भर के काल को २७ भागों में विभाजित करके उनको 'कार्ते' नाम रखा है। एक-एक नक्षत्र कूटमि में सूर्य करीब दो हफ्ते रहता है। इसके अनुसार एक-एक कार्ते १३ या १४ दिन रहता है। अश्विनि से लेकर रेवति तक ऐसे नक्षत्रों के नाम पर कार्ते बनाये हैं।

रविवार से लेकर शनिवार तक हम उपयोग कर रहे हफ्ते का विभाजन ग्रहकक्ष्यों के आधार पर बनाये गये हैं। ये बातें सूर्यसिद्धांत ग्रंथ में है। इसके अनुसार ग्रहकक्ष्यों में चौथावाला सूर्यकक्ष्य है। इसके अनुसार पहला हफ्ता रविवार नाम दिया है। सूर्य से चौथे कक्ष्य में चाँद रहता है। इसलिए रविवार के बाद ''सोमवार'' (सोम यानि चाँद है) बना है। चाँद से चौथे कक्ष्या में बुध रहता है। इसलिए बुधवार... ऐसे ही बाकी दिनों का नाम रखा है।

पंचांग, सिद्धांत

उगादि का नाम सुनते ही याद आनेवाले अंशों में उगादि पच्चडि (आचार) के बाद का स्थान पंचांग का ही है। आनेवाले सालभर में हमारे भविष्य किस प्रकार होगा? इसे जानने की आसक्ति हर एक के मन में रहता है। इसके लिए हर एक आदमी उगादि के दिन पंचांग श्रवण करता है। पंचांग की रचना के लिए सूर्य, दृक जैसे दो सिद्धांत हमारे देश में अत्यंत प्राचुर्य में है। इनमें सूर्यसिद्धांत अत्यंत प्राचीन है। लगभग १८०० सालों से यह प्राचुर्य में है। भट्टोत्पला, दिवाकर, केशव, विजयनंदि, चित्रभानु, श्रीरंगनाथ, मकरंद, नरसिंह, भास्कराचार्य, आर्यभट्टा, वराहमिहिर आदि खगोल गणित (आस्ट्रो मैथमेटिक्स) वैज्ञानिकों ने खगोल परिज्ञान के आधार पर काल विभाजन करके स्पष्ट विवरण दिये हैं। इनमें ई.११७८ में रहनेवाला मल्लिकार्जुन सूरि के द्वारा लिखे गये ''सूर्यसिद्धांतभाष्य'' तेलुगु, संस्कृत भाषाओं में मुद्रित होकर अब भी प्रयोग में है। पंचांग रचनाओं के लिए अत्यंत प्रामाणिक ग्रंथ है। 'सूर्य सिद्धांत', 'आर्यभट्टीयं', 'ब्रह्मस्फुट सिद्धांत' - इन तीन ग्रंथों के आधार पर दुनिया के कई देश अब भी अपने कालमानी को (कैलेन्डर) तैयार कर रहे हैं। दृक् सिद्धांत को केरल राष्ट्र से संबंधित खगोल वैज्ञानिक ''परमेश्वर'' (ई.१४३१) प्रचार में लाया है। सूर्य, दृक् सिद्धांतों के आधार पर ही अब भी पंचांग बनाये जा रहे हैं।

श्रीमत्स्यजयंती (२७.०३.२०२०) के अवसर पर...

श्रीमहाविष्णु का मत्स्यावतार

- श्री ज्योतीन्द्र अजवालिया
मोबाइल - ९८२५११३६३६

भगवान विष्णु को पालनकर्ता कहा गया है अतः वह ब्रह्मांड की रक्षा हेतु विविध अवतार धारण करते है। भगवान विष्णु का दश महान अवतार है। इस में से सबसे पहला अवतार मत्स्यावतार है। जब संसार को किसी प्रकार का खतरा होता है तब भगवान विष्णु अवतरित होते है।

आइये हम श्रीहरि विष्णु का मंगलाशासन करे।

ॐमंगलं भगवान विष्णु मंगलम् गरुडध्वज।

मंगलं पुंडरीकाक्ष मंगलायतनुं हरि।।

भगवान श्रीमहाविष्णु ने वेदों की रक्षा हेतु सबसे पहला मत्स्य अवतार लिया। चैत्र शुक्ल पक्ष की तृतिया के दिन मत्स्य जयंती का उत्सव मनाया जाता है।

भगवान विष्णु का कर्म अद्भुत है। एक बार अपनी योग माया से मत्स्य अवतार धारण करके बहुत सुंदर लीला की थी। 'मत्स्य' संस्कृत शब्द है, मत्स्य का मतलब मछली होता है। भगवान ने मछली बनके वेदों की रक्षा की और असूर का वध भी किया।

हमारे शास्त्र में मत्स्य योनि निंदनीय माना गया है। तमोगुणी भी है। आज हम सभी को मन में प्रश्न उठता है की भगवान सर्व शक्तिमान है फिर भी कर्मबंधन से युक्त छोटे जीव की तरह मछली का रूप धारण क्यों किया? भगवान का ये मत्स्य चरित्र बहुत ही सुंदर और सुखकारक, दुःखनाशक है। तो आइये हम सुंदर मत्स्य चरित्र का अनुसंधान करें।

पिछले कल्प की बात है। कल्प के अंत में ब्रह्माजी शयन कर गये इस वजह से ब्राह्म नैमित्तिक प्रलय हुआ। इस समय भूलोक आदि पानी में विलिन हो गये। ब्रह्माजी शयन कर रहे थे, तब ब्रह्माजी के मुख से चारों वेद बाहर निकले। तब नित्य ब्रह्माजी के पास में रहनेवाला हयग्रीव असुर उस वेदों को चुराकर भाग गया। तब श्रीहरि विष्णु अपने प्राथमिक अवतार मत्स्य के रूप में अवतीर्ण हुए और स्वयं को राजा सत्यव्रत मनु के सामने एक छोटी सी लाचार मछली बना लिया।

द्राविड देश का सत्यव्रत राजा बडे उदार और भगवत परायण थे। एक समय वो सिर्फ पानी पी कर तप साधना कर रहे थे, वही सत्यव्रत राजा वर्तमान महाकल्प में विवस्वान (सूर्य) के पुत्र श्राद्धदेव के नाम से विख्यात हुआ। भगवान ने उसे वैवस्वत मनु बनाया।

मत्स्य अवतार की पौराणिक कथा

सुबह सत्यव्रत राजा सूर्यदेव को जल अर्घ्य दे रहे थे तभी एक मछली उसकी अंजली में आयी। राजा ने मछली को पानी में छोड दिया तब मछली आर्तनाद से बोली के, ''राजन इस महासागर में बडे बडे जलचरप्राणी है, यहाँ मेरी सलामती नही है, मैं बहुत डरी हुई हूँ। आप

मुझे अपने कमंडल में रख लो।'' राजा सत्यव्रत ने दया और धर्म के अनुसार इस मछली को अपने कमंडल में ले लिया और घर की ओर निकले, घर पहुँचते तब वह मत्स्य उस कमंडल के आकार और भी बढ़ गया हो गई। मछली बोली, ''राजन, मुझे बडे पात्र में ले लो, इस पात्र में मेरा जीना मुश्किल है,'' तब राजा ने बडे पात्र में मत्स्य को ले लिया। सिर्फ दो घडी में मत्स्य का आकार और बढ गया। फिर से मत्स्य ने कहा राजन इस पात्र में भी जी ना रहा है,'' तब राजा ने ये मत्स्य को बडा सरोवर में रखा, थोडी देर में ये मछली ने सरोवर में जीना बडा मुश्किल हुआ। अब राजा मत्स्य को समुद्र में ले गया। तब मत्स्य बोला ''हे राजन इस महासागर में बडे बडे भयानक मगर और जलचर प्राणी रहते है मुझे बहुत डर लग रहा है।'' मत्स्य की मयुर वाणी सुन के राजा सत्यव्रत मोहमुग्ध हो गया, और नम्रता से पूछा है मत्स्य रूप में आप कौन हो? पहले मैंने कभी ऐसा महा मत्स्य देखा नही है। जरूर आप श्रीहरि विष्णु हो सकते हो। आपका उद्देश्य क्या है? आप इस मत्स्य के रूप में क्यों अवतरित हुए? आपका ये दर्शन बडा अद्भुत है। इस तरह सत्यव्रत ने बहुत सुंदर स्तुति-प्रार्थना की।

इस समय ये सुनहरि रंगीन मनमोहक मत्स्य ने अपनी असली पहचान उजागर की और अपने भक्त सत्यव्रत को यह सूचित किया कि उस दिवस के ठीक सातवे दिन प्रलय आयेगा तत्पश्चात विश्व का नया सर्जन होगा। वे सत्यव्रत को सभी जडी-बुट्टी, बीज और पशुओ, सप्तऋषि आदि को इकट्टा करके प्रभु द्वारा भेजी गइ नाव में संचित करने को कहा।

ठीक सातवे दिन प्रलय आया। राजा सत्यव्रत ने सब ऋषियों, सब जीवों को अपने साथ नाव में ले लिया। मत्स्य भगवान ने जैसा कहा था वैसा ही दृश्य था। चारों ओर पानी ही पानी, अंधकार भी बहुत था। राजा सत्यव्रत ने भगवान की सूचना के आधार पर वासुकी नाग की रस्सी बनाकर नाव को बहुत बडा मत्स्य के शृंग के साथ बांध दिया। मत्स्य भगवान ये नाव को ले के सुमेरु पर्वत की ओर प्रस्थान किया।

रास्ते में राजा सत्यव्रत ने बहुत सुंदर स्तुति की। जीवों के रक्षा हेतु बडी प्रार्थना की। इस के उत्तर में मत्स्य भगवान ने राजा सत्यव्रत और ऋषि-मुनी को ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग से संपन्न ज्ञान दिया। ये ज्ञान ''मत्स्य पुराण'' के नाम से प्रचलित हुआ।

इसी तरह मत्स्य भगवान ने सब जीवों की प्रलय से रक्षा की, तथा पौधों तथा जीवों की नसलों को बचाया और 'मत्स्य पुराण' की विद्या को नवयुग में प्रसारित किया।

मत्स्य भगवान द्वारा असुर हयग्रीव का वध

जब प्रलय शांत हुआ तब ब्रह्माजी नींद से बाहर आये तब जीवों की रक्षा और वेदों की रक्षा हेतु श्रीहरि विष्णु ने विशालकाय मत्स्य का प्रचंड रूप धारण किया था उस रूप से हयग्रीव असुर का वध किया और वेदों को असुर बंधन

से मुक्त किया, वेदों को ब्रह्माजी को सौंप दिया ऐसा भगीरथ कार्य करके अपनी लीलाओं को समेट कर इस लीला विभूति से भगवान अपनी नित्य विभूति में चल गये।

मत्स्य भगवान और मत्स्य यंत्र की पूजा

मत्स्य भगवान चतुर्भुज है, वो स्वयं इश्वर है, उसका निवास स्थान वैकुंठ है, प्रमुख शस्त्र सुदर्शन चक्र है। श्रीमद्भागवतम्, विष्णुपुराण और मत्स्य पुराण में मत्स्य भगवान का गुणानुवाद अनुसंधान प्राप्य है।

समग्र भारत में सिर्फ ओमकार आश्रम कर्णाटक में मत्स्य नारायण का मंदिर है। मत्स्य नारायण की पूजा, भगवान विष्णु के मूर्ति के रूप में और मत्स्य यंत्र के रूप में होती है। ये सुंदर मंदिर को भक्तों ने दर्शन करके पुनीत बन जाती है।

जब मनुष्य के जीवन में संघर्ष और आपत्ति आते है और घर में, कार्यालय में, व्यापार के स्थान में वास्तुदोष लगता है तब इस स्थान में 'मत्स्य यंत्र' की स्थापना कर के 'मत्स्य मंत्र' का जाप करने से तमाम बाधाओं से मुक्ति मिलती है। यंत्र को पूर्व और उत्तर दिशा में स्थापित करके मंत्र जाप करने का विधान है।

मत्स्यनारायण का मंत्र

तत्पुरुषाय विद्महे महामीनाय धीमही।
तन्नो विष्णु प्रचोदयात।।

तो आइये हम अंत में मत्स्यनारायण का मूल रूप श्रीहरि विष्णु भगवान की स्तुति करके नमन करे...

शांताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं।
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं सुभांगं।।
लक्ष्मीकांतं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानिगम्यम्।
वंदे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैक नाथम्।।

जय श्रीमन्नारायण...

भागवत कथा सागर

शक्तिशाली असुर वृत्रासुर

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवाँघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

मोबाइल - ९८२१९१४६४२

वृत्रासुर की कथा श्रीमद्भागवतम् के छठे स्कन्द में बताई गई है। अपने गुरु बृहस्पति के प्रति अपराध करने के कारण देवताओं का तेज नष्ट हो गया था। तब ब्रह्माजी के सुझाव के अनुसार उन्होने विश्वरूप की शरण ली थी। उन्होने विश्वरूप को अपने गुरु के रूप में स्वीकार करके अपनी खोई हुई शक्ति पुनः प्राप्त की थी। लेकिन अपनी माता की ओर से असुरों से जुड़े होने के कारण विश्वरूप ने चोरी से असुरों को भी यज्ञ की आहुति प्रदान की, अतः जब इन्द्र को यह पता लगा तो उसने विश्वरूप का सिर काट लिया। बाद में अनेक प्रयत्नों के द्वारा शक्तिशाली ब्राह्मण विश्वरूप का वध करने के पाप से इन्द्र ने मुक्ति प्राप्त की।

पुत्र के वध से विश्वरूप के पिता अत्यन्त उत्तेजित थे और उन्होने एक शक्तिशाली पुत्र पाकर उसके द्वारा इन्द्र का वध करने का निश्चय किया। उन्होने एक बड़े यज्ञ का आयोजन किया और यज्ञ की बलिवेदी पर ही वृत्रासुर नामक एक शक्तिशाली असुर प्रकट हुआ। वह पूरी तरह जले हुये काले पहाड़ की तरह था। उसकी मूंछे अत्यन्त कुरूप थीं और दाढ़ी ताँबे के रंग की थी। उसके दिखाई देने मात्र से ही सभी लोग भयभीत होकर विभिन्न दिशाओं की ओर भागने लगे। वह असुर वृत्रासुर नाम से जाना गया क्योंकि उसे देखकर एसा प्रतीत होता था कि मानो उसने अपने शरीर एवं अपनी शक्ति से सभी लोकों को आच्छादित कर लिया हो। इन्द्र एवं अन्य देवताओं ने अपने अस्त्रों के द्वारा उस असुर पर प्रहार किया लेकिन असुर ने पल भर में ही उनके अस्त्रों को निकल लिया। क्षण भर में ही सभी अस्त्र समाप्त हो जाने से देवताओं का तेज एवं उनकी शक्ति खो गई। उन्होने तुरन्त परम पुरुषोत्तम भगवान की शरण ली।

भगवान पहले देवताओं के हृदय में फिर उनके समक्ष प्रकट हुए। सभी देवताओं ने भगवान को दंडवत प्रणाम किया, तब भगवान ने उन्हे भविष्य की कार्य योजना स्पष्ट रूप से बताई। भगवान ने कहा ''मेरे प्रसन्न होने पर कुछ भी असम्भव नहीं है। इन्द्र, तुम दधीचि के पास जाकर उनसे उनका शरीर माँगो। दधीचि एक शक्तिशाली ऋषि हैं और उन्होने ही अश्विनी कुमारों को जीवन मुक्त किया था। उन्होने ही त्वष्टा को अपना

नारायण कवच दिया था। विश्वरूप ने वह नारायण कवच अपने पिता त्वष्टा से प्राप्त किया था। इसी नारायण कवच के कारण दधीचि का शरीर अत्यन्त शक्तिशाली है। अतः तुम जाकर उनका शरीर माँग लो और उसकी हड्डियों से एक शक्तिशाली अस्त्र निर्मित करो। केवल उस शक्तिशाली अस्त्र के द्वारा ही वृत्रासुर का वध सम्भव है। केवल वृत्रासुर की मृत्यु के बाद ही तुम अपने अस्त्रों को पुनःप्राप्त कर सकते हो। वास्तव में वृत्रासुर मेरा भक्त है अतः तुम्हे डरने की आवश्यकता नहीं है।''

देवताओं को आदेश देकर भगवान वहाँ से अन्तर्धान हो गये। तब सभी देवताओं ने दधीचि के पास जाकर उनके शरीर को माँगने के लिए प्रार्थना की। देवताओं ने धर्म के विषय में अच्छा सुझाव भी दिया, जिससे दधीचि बहुत प्रसन्न हुए। दधीचि ने प्रसन्नता पूर्वक देवताओं के हित के लिए अपना शरीर देना स्वीकार कर लिया और योग शक्ति के द्वारा शरीर को त्याग दिया। इन्द्र ने दधीचि की हड्डियों से वज्रायुध का निर्माण किया। वज्रायुध से इन्द्र अत्यन्त शक्तिशाली बन गये। तब इन्द्र ने अपने श्वेत हाथी ऐरावत पर सवार होकर वृत्रासुर पर आक्रमण किया। नर्मदा के तट पर देवताओं एवं असुरों के मध्य घमासान युद्ध हुआ। इन्द्र की वीरता असुरों को भारी पड़ रही थी और वे सभी युद्ध से भागने लगे।

असुर वृत्रासुर ने निम्न प्रकार सम्बोधित करते हुए अन्य असुरों को बदलने का प्रयत्न किया, ''हे असुरों! युद्धभूमि से मत भागो। इस जगत में मृत्यु अटल है, अतः श्रेष्ठ मृत्यु को पाने का प्रयत्न करो। पूर्णतया भगवान का ध्यान करते हुए मृत्यु को गले लगाना या फिर युद्धभूमि में मृत्यु को प्राप्त करना अत्यन्त श्रेष्ठ माना गया है।'' लेकिन किसी ने उसकी बात नहीं सुनी और सभी असुर युद्ध से भागने लगे। देवताओं ने उन सभी असुरों को भगा दिया। वृत्रासुर ने देवताओं के कार्यों से अत्यन्त व्याकुल होकर उनपर निर्दयता से प्रहार करना शुरू कर दिया उसने इन्द्र की ओर अग्रसरित होकर देवताओं को अपने पैरों के नीचे कुचलना प्रारम्भ कर दिया। इन्द्र ने वज्रायुध से तुरन्त उसके हाँथ काट दिये। पर कट जाने पर वृत्रासुर एक पर्वत की भाँति गिर पड़ा। तब भी वृत्रासुर ने अपना मुँह खोलकर ऐरावत समेत इन्द्र को निगल लिया। सभी देवतागण उस घटना को देखकर भौचक्के रह गये। लेकिन नारायण कवच की शक्ति से इन्द्र की मृत्यु नहीं हुई। उन्होने वृत्रासुर का पेट काट दिया और विजयी होकर बाहर आ गये। बाद में वृत्रासुर का सिर काटने में इन्द्र को पूरा एक वर्ष लग गया। वृत्रासुर का सिर पृथ्वी पर गिरते ही सभी लोकों में हर्ष मनाया जाने लगा। तब वृत्रासुर के शरीर से सजीव ज्योति निकल कर बाहर आई और श्रीभगवान के परंधाम को लौट गई। इस प्रकार वह भगवान संकर्षण का पार्षद बन गया।

पापों के फल से दूर भागने वाले इन्द्र को अब वृत्रासुर के मरने से ब्रह्महत्या का पाप लग गया। जिससे इन्द्र का सम्पूर्ण ऐश्वर्य नष्ट हो गया और उन्होने स्वयं को कमल की डंडी में छुपा लिया। इन्द्र की अनुपस्थिति में ज्ञान एवं तप से युक्त नहुष ने स्वर्गलोक पर राज्य किया। सरोवर में कमल की डंडी में रहने के समय माता लक्ष्मी ने इन्द्र की रक्षा की। भगवान विष्णु के ध्यान द्वारा इन्द्र ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त हो सके। बाद में इन्द्र ने पूर्णता के साथ अपना सिंहासन ग्रहण किया।

वृत्रासुर की कथा सुनने वाला व्यक्ति सभी पापों से मुक्त हो जाता है। इसी कारण सभी पुरोहित ध्यानपूर्वक इस कथा का पाठ करते हैं। यह कथा इन्द्रियों को शक्तिशाली बनाने वाली, यश बढ़ाने वाली, ऐश्वर्य बढ़ाने वाली, शत्रुओं पर विजय दिलाने वाली तथा लम्बी आयु प्रदान करने वाली है।

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा

(पंचम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि तापडिया
मोबाइल - ९४४९५१७८७९

९५

श्रीमते रामानुजाय नमः

इससे सच्चे मुमुक्षुओं को संशय रूपी शत्रु से सदा बचकर रहना चाहिए। शास्त्रों में लिखा भी है और बड़ों का कहना भी है कि-

''संशयात्मा विनश्यति''

गीता में भगवान खुद श्रीमुख से आज्ञा कर रहे हैं हे अर्जुन! यदि परमार्थ पथ पर चलन वाले मुमुक्षुओं को शास्त्रों में, गुरु वचनों में संशय रहेगा तो उसके आत्मा का कल्याण नहीं होगा क्योंकि संशय वाले आत्मा का तो विनाश ही होता है। इससे तुम्हें भी यदि अपने आत्मा का अवश्य कल्याण करना हो तो संशय रूप शत्रु को अपने पास से सदा के लिये दूर हटा दो। जैसे बिना यज्ञोपवीत वाले का किया हुआ वैदिक कर्म सब निष्फल हो जाता है उसी प्रकार बिना विश्वास के श्रवण, मनन कुछ काम नहीं देते। चरम मन्त्र की व्याख्या के अन्त में श्री लोक गुरु स्वामी का स्पष्ट कहना है कि-

''अस्मिन्नर्थे विश्वास रहितामन्वयोऽजीर्णे भोजनमिव।''

इसका मतलब यह हुआ कि संशय रहित जो मुमुक्षु लोग हैं, जिनको शास्त्र वचनों में अत्यंत अचल विश्वास है वे ही लोग इस चरम श्लोक के विषय के परम अधिकारी हैं। जिन लोगों को विश्वास नहीं है उन लोगों के लिए इस चरम श्लोक के ऊपर परिस्थिति को विचार वैसा है जैसा अजीर्ण दशा में पूर्ण भोजन करना। जैसे अजीर्ण हालत में भोजन करने वाला मनुष्य सिवाय दुःख के आराम नहीं पाता, उसी प्रकार संशय भ्रम वाले जो चेतन हैं वे यदि चरम श्लोक के ऊपर परिस्थिति को देखें तो सिवाय हानि के उनको लाभ कुछ भी प्राप्त न होगा। सारांश कहने का यह हुआ कि सच्चा मुमुक्षुओं का संशय रूप प्रबल शत्रु से सदा दूर रहना चाहिये। चाहे कितना भी विद्वान हो, चाहे कितना भी अनुष्ठानी हो, चाहे कितना भी भजनानन्दी हो, चाहे कितना भी संयम नियम करने वाला हो, परन्तु यदि उसके हृदय में जरा भी संशय रहता होगा तो उसे एक का भी फल प्राप्त नहीं होगा और जिन लोगों में सद्गुरुओं को कृपा से संशय भ्रम नहीं रह गया है और बड़ों के वचन में पूर्ण विश्वास है वे लोग चाहे एक तुलसी दल भी अर्पण कर दें, उसको परमात्मा सोने के सुमेरु के समान मानते हैं। शास्त्रों में अच्छे पहुँचे हुए मुनियों के भी वचन हैं कि-

''निः संशयेषु सर्वेषु नित्यं बसति वै हरिः।''

इसका अर्थ यह हुआ कि जिन बड़ भागी चेतनों को सद्गुरुओं के वचनों में बिल्कुल संशय नहीं होता है उनके हृदय में श्रीहरि का नित्य ही निवास होता है। यानी संशय रहित महात्माओं के हृदय में भगवान वासुदेव नित्य हो विराजते हैं। श्री तुलसीदासजी भी बार-बार कहे हैं कि-

"विश्वास करि कह दास तुलसी रामपद अनुराग हूँ।"

इसका भी यही भाव हुआ कि श्रीरामजी के श्रीचरण कमलों में अनुराग करने वाले महात्माओं को सबसे पहले संशय भ्रम को छोड़ कर अचल विश्वास करके रहना चाहिये। श्री द्वय मंत्र के अधिकारियों के लिए भी श्री लोक गुरु का यही आदेश है कि-

"फल सिद्धि स्वश्वं भवतीति दाढ़्र्येन स्थितिः।"

इसका मतलब यह हुआ कि सद्गुरुओं की कृपा से भगवान वासुदेव अपना दिव्यधाम हमें अवश्य ही देंगे। इस प्रकार पूर्ण अचल विश्वास के साथ द्वयाधिकारियों को सदा रहना चाहिये। यहाँ तक है कि - *"ननास्तिके नाभिमुखो बुधः स्यात्"* सच्चे मुमुक्षुओं को तो संशय भ्रम वाले लोगों से संगति भी नहीं करनी चाहिए। जैसे दुराचारिणी के संग बैठने से पतिव्रता को भी धर्म भ्रष्ट होने का खौफ रहता है, उसी प्रकार जिन अभागे जीवों का सच्छास्त्रों में, भगवान में, सद्गुरुओं के वचनों में विश्वास नहीं रहता है, संशय-भ्रम बना रहता है, तर्क-वितर्क हुआ करता है उन लोगों की संगति में भूल कर भी नहीं बैठना चाहिए, न उन लोगों के मुख से कुछ सुनना ही चाहिये, न ऐसे अभागे भ्रमिष्ट जीवों के लिये कुछ रहस्य विषय का उपदेश ही करना चाहिए। जैसे ऊसर खेत में बोया हुआ बीज निष्फल जाता है उसी प्रकार संशय भ्रम वालों के लिये किया हुआ उपदेश व्यर्थ चला जाता है। इस कारण सच्चे मुमुक्षुओं को चाहिए कि संशय रूप शत्रु से सदा बच कर रहे।

श्री देवराज गुरु कहते हैं कि एक बार मैं चित्र कूट गया था। एक रोज देखा कि स्फटिक शिला पर शान्त स्वरूप दश बीस मुमुक्षु महात्मा बैठे हुए हैं। उन सबों के मुख पर परम शान्ति की झलक छा रही है। एक महापुरुष उच्च कोटि के विद्वान अच्छे अनुभवी भगवद्विषय कह रहे हैं। उस समय प्रसंग यही हो रहा था जो मैं आप लोगों से पहिले निवेदन कर चुका हूँ। वह उपदेश देने वाले महा पुरुष उन मुमुक्षु महात्माओं से बारम्बार इसी बात पर जोर देकर कह रहे थे कि हे महानुभावों! जैसे बिना जमीन किसान खेती नहीं कर सकता है उसी प्रकार बिना विश्वास के कोई भी सिद्धि नहीं हो सकती है। जिसको मुक्त होने की जरूरत हो उसे अवश्य सच्छास्त्रों में, परमात्मा में, गुरु वचनों में, चाहे जैसे बने वैसे विश्वास करना ही पड़ेगा। इतने में एक महात्मा उस उपदेश देनेवाले महापुरुष से हाथ जोड़ कर पूछे कि कृपानाथ! दास अज्ञानी है, इससे श्रीचरणों में प्रार्थना करना चाहता है। यदि आज्ञा हो और वह दास उसका अधिकारी समझा जाय तो पूछे और सरकार कृपा करके समझा देवें। इतना अवश्य है कि तर्क-वितर्क से दास नहीं पूछता। सरकार सद्गुरु हैं और इस दास को यह विषय मालूम नहीं है और ऐसी जगह यदि संशय दूर नहीं होगा तो फिर कहाँ हो सकता है।

(क्रमशः)

(गतांक से)

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी
मोबाइल - ९४०३७२७९२७

**पेरोन्नु मत्तिल्लै निन्शरणन्नि, अप्पे रळित्तर्क्कु
आरोन्नु मिल्लै मत्त च्चरणन्नि, एन्नि प्पोरुळै
त्तेरुमवर्क्कु मेनक्कु, मुनैत्तन्द शेम्मै शोल्लाल्
कुरुंम् परमन्नु, इरामानुज मेय्म्मै कूरिडिले ॥४५॥**

भो भगवन् रामानुज। परमार्थमेकं प्रतिपादये; भवच्चरणारविन्दादन्यन्न किमपि प्राप्यमस्ति वस्तु। तत्प्रापकं च तदेव न पुनरन्यत् इत्येवंविधं तत्वार्थं सम्यगवगच्छतां महात्मनाम् एतादृशाध्यवसाय रहितस्य मम च या खलु चकास्ति भवन्निर्हेतुककृपापात्रता, तदतिशयो न वाचां विषयः; अपि त्वनुभवैकवेद्यः।

हे रामानुज स्वामिन्। सत्य कहूंगा। आपके चरणारविंदों के सिवा दूसरी कोई प्राप्य वस्तु नहीं होगी; और उसका साधन भी आपके वे ही श्रीचरण हैं। यह तत्वार्थ ठीक जाननेवाले महात्मालोगों, और इस निश्चय से विरहित मुझको एकसम ही आपने जो अपनी कृपा का पात्र बना दिया, यह आपका आर्जवगुण वाचामगोचर वैभववाला है। (विवरण-यह तो सर्वथा उचित है कि श्रीरामानुज स्वामीजी, अपने चरणारविंदों को ही उपाय व उपेय माननेवाले भक्तों पर कृपा करें; परंतु सर्वथा उक्त निश्चय से शून्य मुझ पर भी आपने जो कृपा की, यह आपके आर्जव नामक वाचामगोचर गुण का काम है; यह बात सर्वथा सत्य है।)

क्रमशः

भगवद्गीता और नौजवान

आसुरी गुणों द्वारा विनाश

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवाँघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

मोबाइल - ९८२१९१४६४२

दैवी तथा आसुरी दो प्रकार के गुण होते हैं। भगवान के नियमों एवं आदेशों का पालन करने वाले व्यक्ति दिव्य या देवता कहलाते हैं। भगवान के आदेशों का उल्लंघन करने वाले असंयमित व्यवहार के लोग आसुरी या दैत्य कहलाते हैं। हर देश में निश्चित रूप से कुछ लोग देश के कानून का कठोरता से पालन करते हैं और कुछ नहीं। कानून का पालन करने वाले सम्मानित नागरिक तथा कानून का उल्लंघन करने वाले असभ्य दोषी व्यक्ति होते हैं। कानून का पालन करने वाले व्यक्ति स्वतन्त्रता से जी सकते हैं और स्वेच्छा से कहीं भी जा सकते हैं। लेकिन कानून का उल्लंघन करने वाले भले ही स्वतन्त्र होने का ढ़ोंग कर लें, वे निश्चित रूप से एक दिन पुलिस द्वारा पकडे जायेंगें। भगवद्गीता (श्लोक १६.५) के इस विषय पर उत्तम संदेश में कहा गया है कि ''दिव्य गुण मोक्ष के लिए अनुकूल हैं और आसुरी गुण बन्धन दिलाने के लिए हैं। हे पाण्डुपुत्र! तुम चिन्ता मत करो, क्योंकि तुम दैवी गुणों से युक्त होकर जन्मे हो।''

''निर्भयता'' सभी दैवी गुणों में प्रथम गुण है। इसका अर्थ है भय से पूर्णतया मुक्ति। मनुष्यों को असफलता प्रदान करने वाला तथा क्षति पहुँचाने वाला ''भय'' ही होता है। हृदय में भय (डर) के प्रवेश करते ही असफलता का मार्ग खुल जाता है। शारीरिक दुर्बलता के रहते हुए भी प्रचुर आत्मिक शक्ति प्राप्त करने वाला व्यक्ति निश्चित रूप से अत्यंत कठिन कार्यों में भी सफलता प्राप्त करता है। चलो अब आसुरी गुणों के बारे में विचार करते हैं। घमंड पहला आसुरी गुण हैं। सुन्दरता, धन, प्रतिष्ठा, अन्यों द्वारा अनुगमन, भौतिक शक्ति आदि से घमंड उत्पन्न होता है। आसुरी व्यक्ति इन क्षणिक उपलब्धियों पर घमंड करता है जो कि पल भर में नष्ट हो सकती हैं। यही नहीं स्वयं इन क्षणिक उपलब्धियों को पाने वाला व्यक्ति ही पल भर में नष्ट हो सकता है। शास्त्रों द्वारा ज्ञात होता है कि पूर्व समय में शारीरिक बल के घमंड से असुर देवताओं पर आक्रमण किया करते थे। अनेकों असुर आये और चले गये। यद्यपि भय के कारण लोग उनका अनुसरण तो करते हैं

लेकिन अवसर पाते ही उन्हे अत्यन्त पतित घोषित करने के लिए शीघ्र ही भूल भी जाते हैं। उद्दंडता, मिथ्या अहंकार (दर्प), क्रोध एवं क्रूरता अन्य आसुरी गुण हैं। यह पाँचों आसुरी गुण अज्ञानता से उत्पन्न होते हैं। अज्ञानता ज्ञान की अनुपस्थिति को दर्शाती है। प्रकाश की अनुपस्थिति में अंधकार हो जाता है। इसी प्रकार ज्ञान के अभाव में अज्ञानता फैल जाती है। आसुरी गुणों से बन्धन उत्पन्न होता है। एक पिंजड़े में बन्द तोता कभी आनंद का अनुभव नहीं कर सकता है। जाल में फंसा हुआ चूहा या जेल में बन्द कैदी भी कभी प्रसन्न नहीं रह सकता है। ठीक इसी प्रकार बन्धन उत्पन्न करने वाले आसुरी गुण कभी किसी को आनंद प्रदान नहीं कर सकते हैं।

दैवी गुणों से युक्त व्यक्तियों को उनके मार्ग में बाधाएँ आने पर भी किसी प्रकार की चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं होती है। उनके दु:खों का शीघ्र ही निवारण हो जाता है। पांडव अपने दिव्य गुणों की सम्पत्ति के कारण ही सम्मानित थे। अनेकों वर्षों तक उन्हें बहुत सी कठिनाईयों का सामना करना पड़ा लेकिन फिर भी उन्हें अन्त में आनंद की प्राप्ति हुई। निष्कर्ष यह है कि दिव्य गुणों से आनंद एवं आसुरी गुणों से बंधन की प्राप्ति होती है। अतः युवाओं को केवल दैवी गुण अर्जित करने चाहिए। उन्हे स्वयं को घमंड, उद्दंडता, दर्प, क्रोध एवं क्रूरता तथा अज्ञानता से मुक्त करना चाहिए। आसुरी व्यक्तियों को कैसे पहचाना जा सकता है? उनके चेरहे पर घमंड साफ दिखाई देता है। पूर्णतया अयोग्य होने पर भी वे सम्मान पाने के इच्छुक होते हैं। छोटी-छोटी बातों में भी वे क्रोधित हो जाते हैं और क्रूरता से बात करते हैं। उनमें विनम्रता एवं कोमलता नहीं होती है। वे नियमों का पालन नहीं करते हैं। वे प्रामाणिक प्रथा का पालन न करके सभी कार्य अपनी सनक में करते हैं। एसे आसुरी व्यक्ति निश्चित रूप से चिंताओं के समुद्र की गहराई में डूब जाते हैं, जबकि दैवी गुणों वाले व्यक्तियों को कोई भी चिंता नहीं होती है। नौजवानों को निश्चित रूप से दैवी गुणों की सहायता से जीवन के हर क्षेत्र में आनंद की प्राप्ति करनी चाहिए।

STATEMENT ABOUT OWNERSHIP AND OTHER PARTICULARS ABOUT

SAPTHAGIRI

(MONTHLY)

FORM IV

See Rule 8

1. Place of Publication : TIRUPATI
2. Periodicity of its Publication : Monthly
3. Honorary Editor : **Sri Anilkumar Singhal,** I.A.S., Executive Officer, TTD
4. Printer's Name : **Sri R.V.Vijaykumar,** B.A., B.Ed.,,
   Whether citizen of India : Yes
   Address : Dy. E.O., (Publications and Press) T.T.D., Tirupati.
5. Editor & Publisher's Name : **Dr.K.Radha Ramana,** M.A, M.Phil, Ph.d
   Whether citizen of India : Yes
   Address : Chief Editor, Sapthagiri, T.T.D. Journal, Tirupati.
6. Name and address of individuals who own the Newspaper and partners or shareholders holding more than one percent of the Total Capital } Board of Trustees represented by the Executive Officer on behalf of T.T.D., Tirupati

I, K.Radha Ramana, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

TIRUPATI
Date : 29-2-2020

(Sd/-) Dr.K.Radha Ramana
Signature of the Publisher

(गतांक से)

श्री प्रपन्नामृतम्

(१०वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

मोबाइल - ९९००९२६७७३

भगवान वरदराज द्वारा छः वाक्य प्रदान

श्रीरंगम् से लौटकर रात्रिभर अपने घर में निवास करके प्रातःकाल ही श्रीरामानुजाचार्य श्रीकांचीपूर्ण स्वामी के यहाँ जाकर यतिश्रेष्ठ यामुनाचार्यजी की परंधाम गमन संबंधी दुःखपूर्ण संवाद सुनाया। अपने गुरु का परंधाम गमन सुनकर शिष्यरूप से अपने आचार्य के लिए और्ध्वदैहिक तर्पणादि कृत्य करके वरदराज भगवान की सन्निधि में निवास करने लगे। श्रीरामानुजाचार्यजी स्वर्णकुंभ से जल लाकर प्रतिदिन भगवान वरदराज की जलसेवा करने लगे।

एक बार कान्तिनन्दन रामानुजाचार्य श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी का तरीप्रसाद (उच्छिष्ट भोजन) पाने (करने) की इच्छा से उनसे अपने ही यहाँ प्रसाद पाने का आग्रह किया। वैष्णवोत्तम श्रीरामानुजाचार्य के कोमल भावों को समझकर तथा यह सोचकर कि जगद्धिताय ही इनका संसार में अवतार हुआ है, अतः उनका हृदय नहीं दुखाते हुए निमंत्रण स्वीकार कर लिया।

तदनंतर आनंद विह्वल वैष्णव श्रीरामानुजाचार्य घर जाकर पत्नी को विशिष्ट भोजनों की तैयारी करने का आदेश देकर श्रीमन्नारायण की अर्चना करके श्री कांचीपूर्ण स्वामी के आगमन की प्रतीक्षा करने लगे। लंबी प्रतीक्षा के बाद वे उन्हें लाने के लिए जब श्री कांचीपूर्ण स्वामी के घर की ओर गये उसी समय श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी हस्तिगिरि के पश्चिम मार्ग से आकर श्रीरामानुजाचार्य की पत्नी से यह जानकर कि वे उन्हें बुलाने के लिए ही गये हैं, बोले - ''रक्षकाम्बे! मुझे बड़े जोर से भूख लगी है। भगवान वरदराज की सेवार्थ मुझे शीघ्र ही लौटना भी है। अतः मुझे भोजन दे दो।'' श्रीरामानुजाचार्य की हार्दिक अभिलाषा को न जानकर रक्षकाम्बा ने उन्हें भोजन परस दिया। श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी ने शीघ्रतापूर्वक भोजन करके जूठी पत्तल को दूर फेंककर हस्तादि प्रक्षालन करके हस्तिगिरि के पूर्व मार्ग से भगवान वरदराज की सेवार्थ चल दिये। श्री कांचीपूर्ण स्वामी के चले जाने पर श्रीमती रक्षकाम्बा अवशिष्ट भोजन नौकर को देकर पुनः स्नान करके श्रीरामानुजाचार्य के लिए दूसरा भोजन बनाने लगी।

श्रीरामानुजाचार्य श्री कांचीपूर्णाचार्य स्वामी के यहाँ जाकर उन्हें अनुपस्थित देखकर परिचारकों से सुना कि वे उन्हीं के यहाँ गये हैं, तो शीघ्रतापूर्वक लौटे। यहाँ आकर दुबारा स्नान करके भोजन बनाती हुई पत्नी के द्वारा यह जानकर कि श्री कांचीपूर्ण स्वामी भोजन करके चले गये और चूँकि शूद्र के भोजन कर लेने पर ब्राह्मण को नहीं करना चाहिए, इसलिए उनकी पत्नी ने अवशिष्ट भोजन नौकर को देकर पुनः उनके लिए भोजन तैयार कर रही है, पत्नी पर बहुत झुँझलाए और

पुनः भगवान नारायण की अर्चना करके प्रसाद ग्रहण कर श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी से निवेदन किया कि वे उन्हें पंच-संस्कार संस्कृत कर दें। विष्णुभक्त श्रीरामानुजाचार्य की वाणी सुनकर श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी बोले कि - ''वैष्णव श्रेष्ठ! भगवान वरदराज की सन्निधि में आपका यह कहना उचित नहीं है। मैं शूद्र हूँ अतः आपको मैं अपना शिष्य नहीं बना सकता।''

श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी की युक्तियुक्त वाणी सुनकर पुनः श्रीरामानुजाचार्य बोले कि- ''भगवन! मैं निम्नांकित चार अर्थों को जानना चाहता हूँ, उनको भगवान वरदराज को निवेदित करके श्रीमान् मुझे बतलायें। वे हैं-

उपायेषु च कः साधुरन्तिमस्मरणं तथा।
मोक्षः कदेति द्रष्टव्यः कमाचार्यं समाश्रये।।

अर्थात् - (१) सर्वश्रेष्ठ उपाय (उज्जीवनार्थ) क्या है? (२) अन्तिम समय में भगवत् स्मरण आवश्यक है कि नहीं? (३) मोक्ष की प्राप्ति कब होती है? (४) मैं किस आचार्य का समाश्रयण करूँ?''

श्रीरामानुजाचार्य के प्रश्नों को सुनकर श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी बोले कि- ''आज मैं आपका काम अवश्य करूँगा।''

सब लोगों के सो जाने पर जब श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी भगवान को पंखा झल रहे थे उस समय उनकी मुखाकृति को देखकर श्रीवरदराज भगवान बोले- ''भक्तवर! प्रतीत होता है जैसे आप कुछ पूछना चाहकर पूछ नहीं रहे हैं। जो हृदय में बात हो आप उसे साफ-साफ कहें।'' तदनंतर श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी ने श्रीरामानुजाचार्य के प्रश्नों को भगवान को सुनाया, जिनका उत्तर देते हुए श्रीवरदराज भगवान ने निम्नांकित छः वाक्यों को कहा।

(१) अहमेव परं तत्त्वं जगत्कारणकारणम्।

(२) क्षेत्रज्ञेश्वरयोर्भेदः सिद्ध एव महामते।

(३) मोक्षोपायो न्यास एव जनानां मुक्तिमिच्छताम्।

(४) मद्भक्तानां जनानां च नान्तिमस्मृतिरिष्यते।

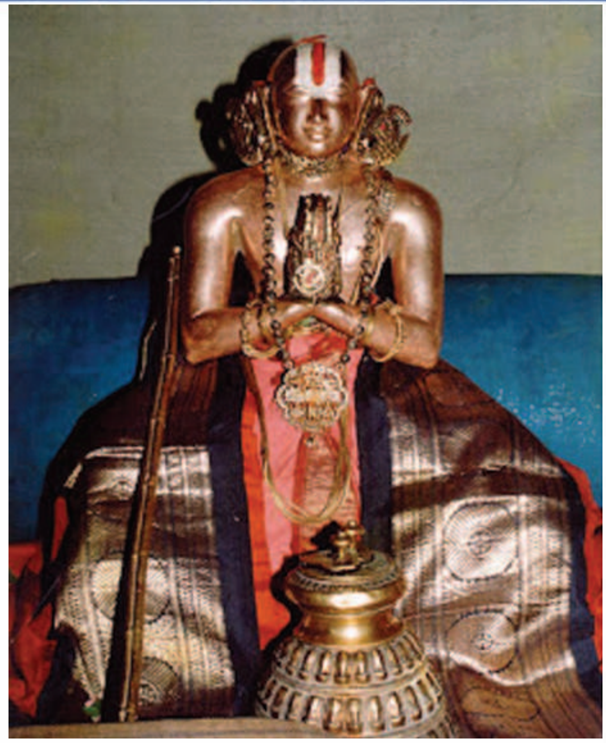

(५) देहावसाने भक्तानां ददामि परमं पदम्।

(६) पूर्णाचार्यं महात्मानं समाश्रय गुणान्वितम्।

अर्थात् (१) मैं संसार (रूपी वृक्ष) का (बीजरूपी) सर्वश्रेष्ठ कारण हूँ। (२) जीव और ईश्वर में भेद (नित्य) सिद्ध है। (३) मुमुक्षुओं के लिए (भगवत्) शरणागति सर्वश्रेष्ठ उपाय है। (४) मुझे अपने भक्तों की अन्तिम स्मृति की अपेक्षा नहीं रहती है। (५) देहत्याग करने पर मैं अपने भक्तों को परपद देता ही हूँ। (६) श्रीरामानुजाचार्य श्रीमहापूर्णाचार्यजी का समाश्रयण करें।

भगवान वरदराज की बातों को श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी के मुख से सुनकर प्रसन्न श्रीरामानुजाचार्य ने तुरन्त ही श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी द्वारा पंच-संस्कार ग्रहण करने की इच्छा से श्रीरंगम् के लिए प्रस्थान किया।

।। श्रीप्रपन्नामृत का १०वाँ अध्याय पूर्ण हुआ ।।

क्रमशः

(गतांक से)

दिव्यक्षेत्र तिरुमल

तेलुगु मूल - श्री जूलकंटि बालसुब्रह्मण्यम्

हिन्दी अनुवाद - श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण

मोबाइल - ८९२८९५२६२२

महा मिलन

अब श्रीनिवास का घाव भरने लग गया है। वह अब अपना काम आप करने लग गया है। इधर-उधर फिरने भी लग गया है और आश्रय के काम-काज में हाथ भी बँटाने लग गया है।

श्रीनिवास को, जिसका हृदय महालक्ष्मी के वियोग से तड़पने लगा हुआ था, माँ की ममता का आसरा मिल गया और वह धीरे-धीरे आम जन-मानस के स्तर पर पहुँच गया।

एक दिन श्रीनिवास घोड़े पर सवार, अरुणानदी को पार, पूरब की दिशा में जंगल में जा रहा था। आश्रम के लिए फल, फूल लाना उसका उद्धेश्य था। वह ऐसा जाते-जाते 'मूलकोना' पहुँच गया, जहाँ राजा आकाश की उद्यान-घाटियाँ उपस्थित थीं।

ठीक उस समय नारायणवरम् के शासक राजा आकाश की लाडली पुत्री पद्मावती अपनी सखियों समेत उन पुष्पोद्यानों में विचर रही थी। उनके शोर-गुल से वहाँ के प्रदेश में कोलाहल मचा हुआ था। सर्वत्र कुँवारी लड़कियों की हँसी-टट्टे से खुशियाँ हीं खुशियाँ उछली जा रही थीं। बातें हो रही थीं। हँसी और मजाक हो रहा था।

इतने में जंगल में से एक सयाना हाथी उन लड़कियों पर आ धमका। उसके घींकार से सारी प्रकृति में भीति उत्पन्न हो गयी और उन मासूम अंतःपुरवासी कन्याओं का क्या कहना कि वे चीखते और चिल्लाते हुए चारों दिशाओं में तितर-बितर दौड़ पडीं। सारा मधुरमय वातावरण एक साथ चीख और चिल्लाहट में बदल गया उस हाथी के प्रवेश के साथ!

सब सखियाँ भाग गयीं, मगर राजपुत्री पद्मावती भय के मारे एक जगह रह गयी। वह अपनी जगह

स्थाणू बन कर खड़ी रह गयी थी और हाथी अपना सूँड उठा कर युवरानी पद्मावती की ओर आ रहा था!

ठीक उसी समय घोडे पर सवार श्रीनिवास वहाँ पहुँच गया।

श्रीनिवास ने देखा कि एक राजवंश की लड़की पर जंगली हाथी का हमला हो रहा है! वह झट उस लड़की पर हो रहे अपाय को भाँप गया और एक ही लपक में घोड़े पर से छलाँग मारते जमीन पर कूद कर, वहाँ के महाकाय, विशाल इमली के पेड़ से एक बड़ी-सी डाली को उखाड़ कर, हाथी के मुँह पर दे मारा। इस हठात् घात से जंगली हाथी सक-पका गया था, तो श्रीनिवास ने दो-चार गंभीर प्रहार उस हाथी के शरीर पर डाली से डांट किया था! श्रीनिवास के निर्भयपूर्वक तथा बलवत् इस प्रतिघात से हाथी एकदम सकपका गया और तुरंत पीछे मुड कर जंगल में रफू-चक्कर हो गया, जहाँ से वह आया था!!

अब पद्मावती ने अपने गोल-गोल विशाल नेत्र खोल कर सामने देखा, तो अपने आगे एक धीर, वीर और सुंदर पुरुष खड़ा है, अपने हाथ वह इमली की डाली पकड़े

आँखों से आँखें मिलीं। युग-युगों के महा निरीक्षण का फल अब सामने साक्षी-भूत हो कर साक्षात्कार दे रहा है। पीढियों का स्वप्न आज वास्तविकता के कगारों पर चढ़ कर निज बनने का पताका फहराने को सिद्ध है। श्रीनिवास और पद्मावती की एकटकी में युगांन प्रेम-चेतना जागृत हो पड़ी थी।

इतने में वे सब कन्यामणियाँ वापस आ धमकीं, जो उस जंगली हाथी के हमले से भाग खड़ी हुई थीं! श्रीनिवास अपनी युगांत चहेती वधू को पारवश्य में अपने हाथों में लेने ही वाला था कि दोनों का एकांत मिलन एकदम भंग हो गया। दोनों अलग हो कर दूर खडे हो गये।

एक सयानी सखी ने श्रीनिवास से प्रश्न किया, ''ऐ छैला! इधर काहे से अंतःपुर की कन्याओं के बीच आ धमका?!...''

श्रीनिवास ने उत्तर दिया, ''शिकारी हूँ। आखेट पर निकला जो हूँ!!''

''तुम्हारा आखेट यहाँ न चलेगा। ये राजा आकाश के अंतःपुर की महिलाओं के विचरने का उद्यान है। यहाँ पराये पुरुषों का प्रवेश सख्त निषिद्ध है। तुम जागरूक हो कर फौरन यहाँ से दफा हो जाओ!!'' अन्य सखियों ने श्रीनिवास को कटु स्वर में आदेश दिया।

श्रीनिवास ने आँख उठा कर अपनी नवीन प्रेमिका की तरफ देखा। उसका कलेजा कंठ में आगया। एक गाढ़ानुराग ने दोनों के हृदय के आवेग की गति बढ़ा दी थी।

श्रीनिवास ने उन मुकरती सखियों से आवेदन किया, ''देखिये लड़कियों! हम दोनों के बीच युग-युगों का गाढ़ अनुबंध बंधा चला आ रहा है, जो तुम नादानों को सख्त मालूम नहीं है। यह कन्या मेरी चहेती है और मैं इस कन्या का हाथ पकडना चाहता हूँ यह कन्या भी मुझे चाहती है और युगों से मेरे लिए और

मुझे पाने केलिए तपस्या करती चली आ रही है! अतः तुम नादानी लड़कियाँ इस तरह हम पर पाबंदी न लगावें! हम दोनों के मधुर मिलन का कहीं तुम लोग अभी के अभी प्रभंद करो, ताकि हम दोनों प्रेमी दुनिया को भूल कर यादें ताजा कर लें!!"

श्रीनिवास के इस कच्चे अनुरोध को पद्मावतीजी की सखियों ने पागलपन समझा। उसे झट उस स्थल को त्याग भाग खड़े होने का आदेश दिया, क्योंकि उस अपराध के परिणाम में उसका सिर काट दिये जाने की संभावना है!!

श्रीनिवास टस-से-मस न हुआ और वह इस चेतावनी के बावजूद भी, पद्मावती युवरानी के और निकट पहुँच गया और उसे अपने करीब लाने का जतन करने लगा!! पद्मावती थी श्रीनिवास के इस हाठात् दर्शन ने विवश हो गयीं और निर्विकार ढंग से श्रीनिवास की तरफ आकृष्ट हो जाने लगीथी!!

सखियों ने देखा कि हालत हाथ से छूटी जाने लगी है। जरा देश के पश्चात् इन दोनों के बीच न जाने क्या घटना घटे! उन्होंने श्रीनिवास को वहाँ से हट कर चले जाने को कहा। उसके न हटने से उन्होंने पत्थर उठा कर उस पर फेंका कि वह वहाँ से राज-कर्मचारियों के पहुँच जाने से पहले ही भाग जाये।

श्रीनिवास पर अविश्रांत पथपाव हुआ।

उसका शरीर पत्थरों के लगने के हुए घावों से सून निकलने लगा।

कन्याओं ने पद्मावती को घसीटती हुई वहाँ से दूर ले चली गयीं और श्रीनिवास अकेला सून से लतपत शरीर के साथ वहीं का वहीं चंद देर स्थाणू बन कर खड़ा रह गया। फिर, कन्याओं के झुंड के ओझल हो जाने के पश्चात् धीरे-से घोडा चढ़ कर वहाँ से तिरोगमित होकर चला गया!!

वेदवती ही पद्मावती

वैकुंठ के स्वामी श्रीमन्महाविष्णु जब भी शिष्टों के रक्षणार्थ वैकुंठ को छोड़ कर अवतार धर कर धरामंडल पर चले आते, तो

उनकी अर्धांगी महालक्ष्मी भी अपने केलिए उचित अवतार धर कर अपने पतिदेव के साथ भूमंडल पर आ जाती थी। उस समय उनकी छायाएँ वैकुंठ में रह कर, उसका शासन चलाती थीं।

ऐसी हावत में लक्ष्मीदेवी की छाया ने सोचा कि यदि वह भी अवतार धर कर, श्रीमन्महाविष्णु से विवाह कर परिवार चलाने से कितना सुख मिलेगा!! - बस, लक्ष्मी की

छाया के ऐसा सोचते ही, उसने ''कुशध्वज'' नामक ब्राह्मण की पत्नी मालावती के गर्भ में जनम लिया। उसे समय कुशध्वज वेद-पठन कर रहा था। इतना ही नहीं, उस दिव्य शिशु के जनम के समय सूति का गृह में वेद पठन निरंतराय ढंग से सुनाई देने लगा! इस अद्भुत पर आश्चर्य होकर कुशध्वज ने अपनी पुत्री का ''वेदवती'' नाम दिया!!

वेदवती को एक राक्षस ने कामित कर उससे संभोग करना चाहा। उससे छुटकारा पाकर, वह श्रीहरि केलिए तप कर रही थी कि लंका के राजा रावण ने आकर उस पर मोहित होकर, उससे परिणय करना चाहा। इन सब हरकतों से तंग आकर वेदवती योगाग्नि कल्पित कर, उसमें कूद कर आत्मत्याग कर गयी।

वेदवती - सीता - इन्द्रसेना - अनामिका - द्रौपदी - पद्मावती।

इस प्रकार वैकुंठ की महालक्ष्मी की छाया ने विविध जन्म धर कर, अपने हर जन्म में महाविष्णु को पति के रूप में पाना चाहा था। महाविष्णु के लिए उसकी तड़प सर्वदा संस्तूयनीय रही!

कलियुग के प्रारंभ के १८ साल पश्चात् तिरुमलगिरि से आग्नेय दिशा में ५० कि.मी. की दूरी पर स्थित नारायणवरम् के पालक राजा आकाश निस्संतान था। उसने संतान के लिए पुत्रेष्टि करनी चाहिए। यज्ञशाला के लिए जब राजा आकाश स्वयं हल जोत कर धरती को साफ कर रहा था, तो धरती के बीच से

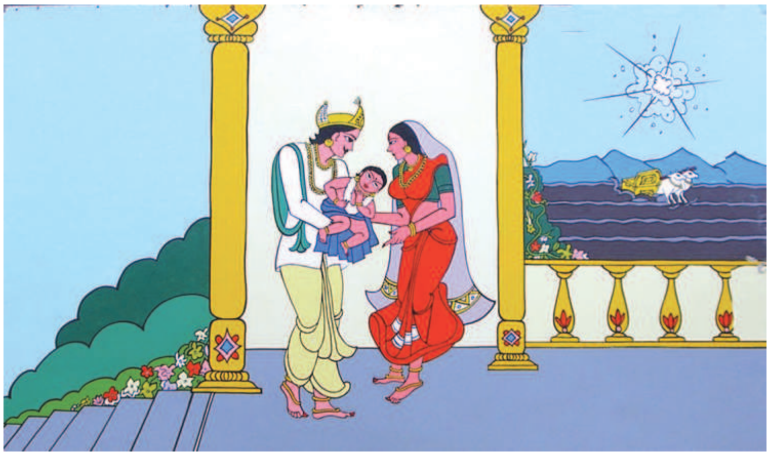

एक कन्याशिशु मिली, जो एक सुगन्ध संभरित कमल के बड़े फूल में लेटी हुई थी! कमल के फूल में मध्य लेटी पायी जाने से राजा ने उसे ''पद्मावती'' नाम दिया। राजा उस अयाचित मिली शिशु को साक्षात् भगवान का प्रसाद मान कर बडे लाड-प्यार के साथ पाल-पोस कर बड़ा किया था!

इसी पद्मावती अपने पिता के पुष्पोद्यान में सखियों के साथ विचरने गयी, तो उसका श्रीनिवास के साथ मिलन हो गया था!

क्रमशः

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

गोदाता को सूचना

१) तिरुपति में स्थित ति.ति.देवस्थान के संबंधित श्री वेंकटेश्वर गो संरक्षण शाला में देशवाली गाय मात्र ही को पूर्वानुमति से स्वीकारते हैं।

२) स्वस्थ और ठीक रहने वाली देशवाली गो जाति मात्र ही को स्वीकारते हैं।

गोसंरक्षणाधिकारी,
ति.ति.दे., तिरुपति।

आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!

आयोजक - महामहोपाध्याय समुद्राल लक्ष्मणय्या,
श्री किरणभट

हिन्दी में निर्वहण - डॉ.सी.आदिलक्ष्मी
मोबाइल - ९९४९८७२१४९

पाठ - २

गुणिताक्षराणि (बारहखडी) :-

क् + अ = क

क् + आ = का

क् + इ = कि

क् + ई = की

क् + उ = कु

क् + ऊ = कू

क् + ऋ = कृ

क् + ॠ = कॄ

क् + ऌ = क्ऌ

क् + ए = के

क् + ऐ = कै

क् + ओ = को

क् + औ = कौ

क् + अं = कं

क् + अः = कः

ङ	ङा	ङि	ङी	ङु	ङू	ङृ	ङॄ	ङे	ङै	ङो	ङौ	ङं	ङः
झ	झा	झि	झी	झु	झू	झृ	झॄ	झे	झै	झो	झौ	झं	झः
र	रा	रि	री	रु	रू	रृ	रॄ	रे	रै	रो	रौ	रं	रः
श	शा	शि	शी	शु	शू	शृ	शॄ	शे	शै	शो	शौ	शं	शः

मार्च महीने का राशिफल

- डॉ.केशव मिश्र
मोबाइल - ९९८९३७६६२५

मेषराशि - शिक्षा क्षेत्र में विकाश होगा। व्यापारिक लाभ होगा। वायु विकार से परेशानी सम्भव है। नित्य रुद्राभिषेक करना कल्याणकारी। ता. १२, १३, १४, २१, २२, २८, २९ श्रेष्ट।

वृषभराशि - शिक्षा क्षेत्र में अधिक परिश्रम से सफलता प्राप्त होगा। परिश्रम का उत्तम फल मिलेगा, व्यापार तथा नौकरी में लाभ, भूमि से लाभ। पारिवारिक उलझन बढेगा। शनि की ढ़ैया के लिए हनुमानजी का उपासना, सुंदरकांड का पाठ अथवा पीपल वृक्ष में दीपदान, लोह अंगुठी अवश्य धारण करना चाहिये।

मिथुनराशि - शिक्षा, व्यापार तथा नौकरी में वृद्धि होगा, स्वास्थ्य सामान्य अनुकूल रहेगा। धार्मिक कार्यों में रुचि बढ़ेगी। राजनीतिक लोगों से संपर्क होगा। संतान तथा मित्रों का अभ्युदय होगा। गणेशजी की उपासना से कष्टों से राहत मिलेगी।

कर्कराशि - व्यापार में सामान्य लाभ होगा। स्वास्थ्य ठीक, कार्य में मन लगेगा। पत्नी की स्वास्थ्य प्रतिकूल रहेगा। घर में मांगलिक कार्य सम्पन्न होगा। मित्रों से लाभ। किसी विशेष कार्य वास्ते दूर यात्रा संभव है जो लाभदायक होगा।

सिंहराशि - स्वास्थ्य अनुकूल रहेगा। परिश्रम का फल मिले, कार्य देरी से ही सिद्ध हो पायेगा। किन्तु सिद्ध जरूर होगा। मानसिक चिंता रहेगी। मन प्रसन्न रहेगा। दाम्पत्य सुख प्राप्त होंगे।

कन्याराशि - कार्य में बाधायें आती रहेंगी किन्तु सिद्ध हो जायेंगे। शनि की अढ़ैया के कारण मानसिक चिन्ता तथा कलह से मन अशान्त रहेगा। हनुमानजी का दर्शन, पीपल वृक्ष में जलदान तथा दीपक दान करना चाहिए।

तुलाराशि - समय अनुकूल नहीं है। सावधानी से समय का प्रयोग करें। व्यर्थ समय की बर्बादी आपको आगे मुश्किल में डाल देगी। विरोधियों का शमन होगा। बन्धुजनों का सहयोग मिलेगा।

वृश्चिकराशि - शिक्षा क्षेत्र से सामान्य लाभ मिलेगा। पूर्वकृत परिश्रम का फल अनायास प्राप्त हो जाएगा। नेत्र तथा उदर विकार सम्भव है। घर में मांगलिक कार्य का योग बनता है। हनुमानजी का आराधना से परेशानी शान्त होगा।

धनुराशि - व्यापार से लाभ होगा। भूमि, भवन से सम्बन्धी कार्य में अधिक परिश्रम से सफलता प्राप्त होगा। नये कार्य का सृजन होगा। भगवती दुर्गा देवी की उपासना से लाभ होगा।

मकरराशि - शनि की साढ़ेशाती के कारण शिर, शूल, शत्रु प्रकोप, शारीरिक एवं मानसिक विकार तथा पारिवारिक समस्याओं में वृद्धि होगी। मास की समाप्ति पर सामान्य स्थिति हो जायेगी।

कुम्भराशि - शत्रु परास्त होंगे। मास मध्य पर्यन्त आपको पूर्ण उत्साह रहेगा, बाद में कुछ आलस्य के कारण आपको घेरेंगे। आकस्मिक धन प्राप्ति के योग हैं। भाग्योदय होने की सम्भावना है। शनिवार को व्रत अथवा शंकरजी की उपासना से समस्त अरिष्टों का शमन होगा।

मीनराशि - पद प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। बहुत समय से अटका कार्य बनने के योग हैं। व्यस्तता बढ़ेगी, स्वास्थ्य ठीक, कारोबार में लाभ, शुभ कार्य में रुचि, बृहस्पतिवार का व्रत, भगवान विष्णु की उपासना, गुरु का यंत्र धारण करने से समस्त अरिष्टों का शमन होगा।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

सप्तगिरि

(आध्यात्मिक मासिक पत्रिका)

चंदा भरने का पत्र

१. नाम : ....
(अलग-अलग अक्षरों में स्पष्ट लिखें) ....
....
पिनकोड ....
मोबाइल नं ....

२. वांछित भाषा : ☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ कन्नडा ☐ तेलुगु ☐ अंग्रेजी ☐ संस्कृत

३. वार्षिक / जीवन चंदा :

४. चंदा का पुनरुद्धरण :

(अ) चंदा की संख्या :

(आ) भाषा :

५. पेय रकम :

६. पेय रकम का विवरण :

नकद (एम.आर.टि. नं) दिनांक :

धनादेश (कूपन नं) : दिनांक :

मांगड्राफ्ट संख्या : दिनांक :

प्रांत :

दिनांकः चंदा भरनेवाला का हस्ताक्षर

....

- वार्षिक चंदा : रु.६०.००, जीवन चंदा : रु.५००-००
- नूतन चंदादार या चंदा का पुनरुद्धार करनेवाले इस पत्र का उपयोग करें।
- इस कूपन को काटकर, पूरे विवरण के साथ इस पते पर भेजें–
- संस्कृत में जीवन चंदा नही है, वार्षिक चंदा रु.६०-०० मात्र है।

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, के.टी.रोड,
तिरुपति-५१७ ५०७. (आं.प्र)

नूतन फोन नंबरों की सूचना

चंदादारों और एजेंटों को सूचित किया जाता है कि हमारे कार्यालय का दूरभाष नंबर बदल चुका है और आप नीचे दिये गये नंबरों से संपर्क करें–

कॉल सेंटर नंबर
0877 - 2233333

चंदा भरने की पूछताछ
0877 - 2277777

अर्जित सेवाएँ और आवास के अग्रिम आरक्षण के लिए कृपया इस नंबर से संपर्क करें–

STD Code:
0877

दूरभाष :

कॉल सेंटर नंबर :
2233333, 2277777.

Edited and Published on behalf of T.T.Devasthanams by **Dr.K.Radha Ramana, M.A., M.Phil, Ph.D.,** Chief Editor, T.T.D. and Printed at T.T.D. Press by **Sri R.V.Vijaykumar,** B.A., B.Ed., **Dy.E.O.,** (Publications & Press), T.T.D. Press, Tirupati-517 507.

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

ऑंटिमिट्टा
श्री कोदंडरामस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव
०२-०४-२०२० से १०-०४-२०२० तक

०२-०४-२०२० गुरुवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - शेषवाहन

०३-०४-२०२० शुक्रवार
दिन - वेणुगानालंकार
रात - हंसवाहन

०४-०४-२०२० शनिवार
दिन - वटपत्रशायी अलंकार
रात - सिंहवाहन

०५-०४-२०२० रविवार
दिन - नवनीतकृष्णालंकार
रात - हनुमत्सेवा

०६-०४-२०२० सोमवार
दिन - मोहिनीसेवा
रात - गरुडसेवा

०७-०४-२०२० मंगलवार
दिन - शिवधनुर्भाणालंकार
रात - एदुर्कोलु, कल्याणोत्सव,
गजवाहन

०८-०४-२०२० बुधवार
दिन - रथ-यात्रा

०९-०४-२०२० गुरुवार
दिन - काळीयमर्दनालंकार
रात - अश्ववाहन

१०-०४-२०२० शुक्रवार
दिन - चक्रतीर्थ
रात - ध्वजावरोहण

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY Published by Tirumala Tirupati Devasthanams
printing on 25-02-2020. Regd. with the Registrar of Newspapers under "RNI" No.10742, Postal Regd.No.TRP/11 - 2018-2020
Licensed to post without prepayment No.PMGK/RNP/WPP-04/2018-2020